ॐ

स्वामी रामतीर्थ

भाग २६ वां।

परमहंस स्वामी रामतीर्थ

प्रकाशक,

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग।

लखनऊ।

श्री

स्वामी रामतीर्थ

उनके सदुपदेश–भाग २६।

प्रकाशक

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग।

लखनऊ।

[प्र]थम संस्करण प्रति २००० } —:※:— { मई १९३४ वैशाख १९९१

फुटकर

[बि]ना जिल्द ॥=) सजिल्द ॥|=)

के० सी० बनर्जी के प्रबन्ध से
ऐंग्लो ओरियन्टल प्रेस, लखनऊ. में छपी—१९२४

❀ प्रार्थना ❀

श्री स्वामी रामतीर्थजी महाराज के जितने लेख, व्याख्यान और पत्र उनके पट्ट शिष्य श्री नारायण स्वामी जी से इस लीग को मिले थे, उन सब का हिन्दी अनुवाद ग्रंथावली के २६ भागों में प्रकाशित होगया और अब केवल थोड़ा सा शेष अनुवाद रहता है, जो २७ वें भाग में प्रकाशित होगा। अत एव सब रामभक्तों वा राम प्यारों से सविनय प्रार्थना है कि जिस किसी के पास स्वामी जी महाराज का कोई ऐसा लेख, पत्र या व्याख्यान हो, कि जिस का अभी तक हिन्दी अनुवाद प्रकाशित न हो सका हो, उसे वह कृपया शीघ्र भेज दें जिस से २७वें भाग में वह भी स्थान पा ले और इस प्रकार ग्रन्थावली से बाहिर रामका कोई भी लेख इत्यादि न रहने पाय

भवदीय

मन्त्री

श्री राम तीर्थ पब्लिकेशन लीग

विषय सूची

Book on Education and Freedom.

The Seed of Race by
Sir John woodroffe. Price Re. 1.

Thoughts on Democracy
By Joseph Mazzini. Price As. 4.

The Drink and Opium Evil
A valuable contribution to the prohibition literature. Price As. 4.

How India can be Free by C F. Andrews
An inspiring message. Price As. 4.

Indian Independence by C F. Andrews
The Immediate Need. Price As. 4.

The Soul of India (Third edition)
A vision of the past and future by Mrs. Sarojini Naidu. Price As. 4.

India's Flag
By C. Rajagoplachari. Price As. 2.

The Temple of Freedom.
By Sarojini Devi. Price As. 4

Rule by Murder by Talstory Price As 2.

Nicolai Lenin .
His Life and Work. Price As. 8.

The Only Means by
Leo Tolstoy. Price As. 2.

Fables and Legends of
Count leo Tolstoy (263 pages) Price Re. 1.

Indian Home Rule (Hind Swaraj)

The Booklet is a severe condemnation of Modern civilization. The views expressed by Mahatma Gandhi show the only true way to Swaraj. Third edition. Price As. 6.

The Great Trial

Of Mahatma Gandhi with a foreword by Mrs. Sarojini Naidu. Price As. 4.

Mahatma Gandhi

His Life. Writings and Speeches with a foreword by Mrs. SAROJINI NAIDU. Over 450 pages. Tastefully bound with an index.

Price Rs. 2.

India's will to Freedom

By Lala Lajoat Rai. A collection of writtings. and Addresses on the present situation and the work Price Rs. 2-8-0

Works of SWAMI RAMA In English	Rs.	a.
Four volumes, price each volume	2	0
Sketch of Rama's life with an essay on Mathematics	0	12
Heart of Rama, pocket size, Supr.	1	0
Inferior edition	0	8

Swami Rama's poems. Pocket edition. In press and shall be out shortly.

निवदन

भगवदेच्छा से लीग आप की सेवा में पांचवेंवर्ष का द्वितीय भाग अर्थात् ग्रन्थावली का छब्बीसवां भाग भेजने में सफल हुई है, और आशा है कि सत इसवां भाग भी अब एक दो मास के भीतर २ वह शीघ्र ही पाठकों के पास पहुँचा सकेगी।

जिस किसी भाषा में स्वामी जी महाराज के व्याख्यान, लेख, उपदेश और पत्र लिखे गये वा प्रकाशित हुए थ, उन सब का हिन्दी अनुवाद हो गया और लगभग सब का सब ग्रन्थावली में प्रकाशित हो गया है, केवल एक भाग सताईसवां अब बाकी रहता है, जिस में अवशिष्ठ बचा खुचा सब का सब प्रकाशित हो जायगा। इस के बाद स्वामी राम का कोई व्याख्यान वा लेखादि छपना बाकी नहीं रह जायगा। और इसीलिये अठाइसवें भाग से नयी पुस्तक का आरम्भ होगा, अर्थात् पंजाब के नगर कपूर्थला निवासी बावा नगीना सिंह साहिब वेदी कृत उर्दू वेदानुवचन का हिन्दी अनुवाद २८ वें भाग से छपना आरम्भ होगा।

जिस किसी राम प्यारे के पास स्वामी रामका कोई ऐसा पत्र, व्याख्यान या लेख हो कि जो अभीतक ग्रन्थावली के किसी अंक में प्रकाशित न हो सका हो तो उसे वह भेजने की कृपा करें जिससे कि वह भी २७वें भागमें प्रकाशित होजाय। और राम के समग्र लेखों के अन्तर्गत आ जाय।

पाठकगण यह पढकर प्रसन्न होंगे कि स्वामी राम के पूर्वाश्रम के गुरु भगत धन्नाराम जी जिनकी संक्षिप्त जीवनी ग्रन्थावली के अठारहवें भाग में दी जा चुकी है और

जो स्वामीराम जी की जीवनी से सब से ज्यादा परिचित हैं, उन्होंने स्वामी राम जी की जीवनी सविस्तर अपने हाथ से लिखने का संकल्प किया है। ईश्वर करे उन का संकल्प शीघ्र फलीभूत हो जिससे लीग उस जीवनी को शीघ्र प्रकाशित करके पाठकगण की सेवा में भेज सके। ईश्वर ने चाहा और राम प्यारों के शुद्ध हृदय की प्रेरणा हुई तो यह काम शीघ्र सफल होजायगा, अन्यथा जो लोगों की प्रारब्ध।

श्री राम बादशाह की जितनी प्रकार की फोटो लीग में मौजूद थीं वे भी सब एक के बाद दूसरी करके प्रकाशित हो चुकी हैं। यदि किसी राम प्यारे के पास राम बादशाह की कोई और फोटो मौजूद हो तो वह कृपया उसे भी शीघ्र भेज दें जिस से कोई भी फोटो राम प्यारों के पास पहुँचने से न रह जाय। अन्त में राम प्यारों से यह प्रार्थना है कि ग्रन्थावली के इन सब भागों को शीघ्र विकवाने का प्रयत्न करें जिस से एक ओर स्वामी जी के उपदेशों का प्रचार अधिक हो जाय, दूसरी ओर कार्यकर्त्ताओं का उत्साह बढ़ने लगे, और तीसरी ओर राम के समग्र उपदेशों की अति उत्तम आकार में पुनरावृत्ति प्रकाशित होनी आरम्भ हो जाय।

भवदीय

मन्त्री,

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग.
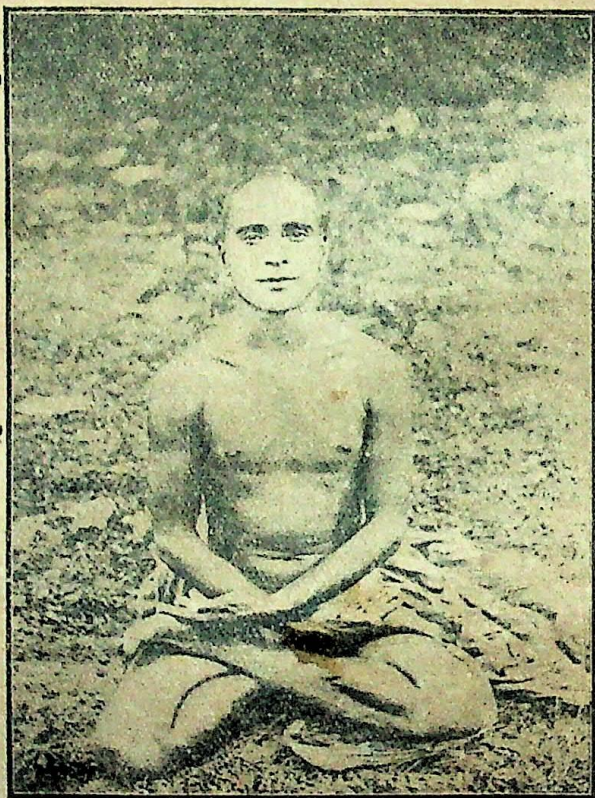
श्री स्वामी रामतीर्थ ।

देहरादून १९०५
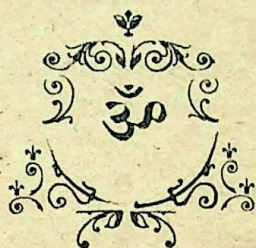
स्वामी रामतीर्थ ।

मृत्यु के बाद
या
सब धर्मों की संगति (एक वाक्यता)

१५ जनवरी १९०३ को गोलडेन गेट हाल में दिया हुआ व्याख्यान ।

महिलाओं और भद्रपुरुषों के रूप में अमर और सब धामों के उद्देश्य रूपः—

इस हाल में अब तक जो व्याख्यान दिये गये हैं वे बहुत कठिन थे, उनके विषय गूढ थे। किन्तु आज का भाषण अपेक्षाकृत सरल है।

कुछ वर्ष पूर्व जब राम भारतवर्ष में था, तब उसके हाथ

में एक रेवरेंड डाक्टर, एक अमेरिकन सज्जन, भारत के एक विश्वविद्यालय के अध्यापक की एक पुस्तक आई। इस पुस्तक का विश्य था "मृत्यु के उपरान्त"। बड़े ही सुन्दर रूपक वा अलंकार द्वारा उसमें दिखलाया गया था कि यह दुनिया एक स्टेशन के समान है और परलोक खाड़ी के अथवा सागर के पार दूसरे स्टेशन के समान है, और इस खाड़ी वा सागर के पार जाने वालों को टिकट खरीदना पड़ता है। जिनके पास ठीक प्रकार के टिकट नहीं हैं, वे जहाज़ पर से गहरे गर्त (abyss) में फेंक दिये जांयगे। जिनके पास ठीक तरह के टिकट हैं, वे ठिकाने पर जाने पावेंगे। टिकट कई तरह के हैं, पहला दर्जा, दूसरा दर्जा, तीसरा दर्जा, इत्यादि। फिर कुछ नकली झूठे टिकट हैं। वे सफेद, काले, पीले, हरे, आदि हैं। किन्तु ठीक तरह के टिकट, जो तुमको ठिकाने पर पहुँचावेंगे, लाल हैं, और ईसा अर्थात् क्राइस्ट का खून उनमें भरा हुआ है। जिनके पास ऐसे टिकट हैं सिर्फ वही सफलतापूर्वक ठिकाने पर पहुँचने पावेंगे, दूसरे कदापि नहीं, कदापि नहीं,। सफेद, काले, पीले, तथा अन्य प्रकारों के टिकट मानो दूसरे धर्मों के टिकट हैं, और लाल टिकट जिनमें ईसू मसीह का रक्त लगा हुआ है इसाई धर्म के टिकट हैं। पुस्तक का यह विषय था और बड़ी सुन्दरता से पेश किया गया था। रेवरेंड डाक्टर ने अपनी सम्पूर्ण प्रवीणता और अंग्रेज़ी साहित्य का अपना सम्पूर्ण ज्ञान यह पुस्तक लिखने में लुटा दिया था।

केवल इसाईयों का ही नहीं, दूसरे धर्मों के लोगों का भी, कुछ कुछ ऐसा ही विश्वास है। मुसलमान कहते हैं कि मृत्यु के बाद, टिकटकलक्टर, बड़े स्टेशन मास्टर, या तहसील

जांचने वाले हज़रत मोहम्मद हैं, और जिनके पास हज़रत मोहम्मद का चिन्ह न होगा, वे नरक में डाल दिये जांयगे। दूसरे धर्मों के भी इसी प्रकार के बिचार हैं, और वे कहते हैं कि सब मुर्दे चाहे कहीं भी–अमेरिका, यूरोप, अफरीका, आस्ट्रेलिया या एशिया में – वे मरे हों, भुगतान के लिय एक मनुष्य के हवाले कर दिये जांयगे, चाहे वह ईसा हो, चाहे मोहम्मद, चाहे बुद्ध, ज़ोरोआस्टर, कृष्ण, या कोई और व्यक्ति। धर्मों में झगड़े और विवादों का यही कारण है। यह अन्ध विश्वास, यह गर्वान्ध विचार इस संसार में अधिकांश उस रक्तपात का कारण है, जो (रक्तपात) धर्म के नाम में किया गया है।

इस विषय पर वेदान्त दर्शन का बिचार तुम्हारे सामने रक्खा जायगा। वदान्त इन सब धर्मों का समन्वय कर देता है, और कहता है कि दूसरे के अधिकारों को बिना दबोचे इनमें से हरेक ठीक हो सकता है। आप के ठीक होने के लिये यह ज़रूरी नहीं है कि आप अपने भाईयों को ग़लत करें। यह बहुत बड़ा विषय है, और लगभग एक घंटे के थोड़े से समय में वेदान्त दर्शन की व्याख्या के अनुसार विषय के केवल अत्यन्त मुख्य पहलुओं पर हम विचार कर सकते हैं।

इस संसार की सब उन्नति की एक सुन्दर रेखा है। विश्व का सब विकास और उन्नति एक तालबद्ध रेखा में है। इस संसार का सब आन्दोलन वा स्फुरण स्वरबद्ध है। उठाव और गिराव, ऊँच और नीच, एक नियमबद्ध क्रम में हुआ करते हैं। जैसा कि गणित विद्या प्रकट करती है कि हरेक अधिकतम (maximum) के लिये एक

न्यूनतम (minimum) होना ज़रूरी है। अधिकतम और न्यूनतम बिन्दु बारी बारी से होते हैं। दिन-रात हमारी गति तालबद्ध है। जब तुम्हें चलना होता है, तब पहले एक पैर उठाते हो और फिर दूसरा। साल की ऋतुएँ निश्चित क्रमपूर्वक एक दूसरी के बाद होती हैं। वही ऋतुएँ बार २ होती हैं, जिसे सामयिक गति कहते हैं। इस संसार में सामयिक गति है। नित्य तुम जागते हो और सोते हो, तुम सोते हो और जागते हो। जिस प्रकार सोना और जागना ठीक क्रमपूर्वक एक दूसर के बाद होता है, उसी प्रकार वेदान्त के अनुसार, जीवन और मरण, मरण और जीवन भी ठीक क्रम से एक दूसरे का अनुगमन करते हैं। इस सम्पूर्ण विश्व में किसी स्थान पर एकाएक रुकाव कभी नहीं हुआ। कालचक्र क्या कभी रुकता है? नहीं। क्या आप जानते हैं कि समय कब वा कहां से शुरू हुआ? क्या स्थान (Space) कहीं भी कभी रुकता है? नहीं। कहीं अन्त नहीं है। क्या नदियां कभी रुकती हैं? आप कहते हैं कि वे रुकती हैं। नहीं, वे नहीं रुकतीं। जो नदियां समुद्र में गिरती हैं, वे भाप के रूप में ऊपर उठती हैं, फिर लौट कर पहाड़ों को जाती हैं, और फिर बह कर समुद्र में पहुँचती हैं, और समुद्र से फिर लौट कर पहाड़ों को जाती हैं। मान लो कि यहां एक मोमबत्ती है। लगभग एक घंटे में वह जल जाती है, बत्ती और सब। तुम कहते हो वह मर-जाती है। नहीं, वह नहीं, वह नहीं मरती। रसायन विद्या बताती है कि वह नहीं मरती। उस का केवल रूपान्तर हो जाता है। इस से उत्पन्न होने वाले कार्बन डायोकसाइड (carbon dioxide) और जल फिर उद्भिज्ज पदार्थों (वनस्पतियों) में प्रकट होते हैं। कुछ भी नहीं नाश होता है।

इस दुनिया में सारी प्रगति (progrsss) एक चक्र में या गोलाकार है। यह देखो, तुम ज़िन्दा हो, तुम मरते हो। मृत्यु के बाद की यह दशा क्या सदा बनी रहेगी? तुम्हें ऐसा कहने का कोई अधिकार नहीं है। इस प्रकार का बयान करना प्रकृति के नियमों के विरुद्ध है। जब तुम कहते हो कि मृत्यु के बाद अनन्त नरक भोग है और जीवन बिलकुल नहीं है, तब तुम संसारके संचालक रूप अति कठोर नियमों की अवज्ञा शुरू कर देते हो। तुम्हें ऐसी बात कहने का कोई अधिकार नहीं है। मनुष्य के मरने के बाद, यदि परमेश्वर उसे सदा के लिये नरक में डाल देता है, तो वह परमेश्वर बड़ा ही वैरशील है। एक मनुष्य अपनी ७० साल की ज़िन्दगी टेर करके (बिताकर) मर जाता है। विचारे को ठीक प्रकार की शिक्षा पाने के अवसर नहीं मिले, अपने उन्नत करने के उचित उपाय उस के हाथ नहीं लगे। दीन माता-पिता से उस का जन्म हुआ था, जो उसे शिक्षा नहीं दे सके, जो उसे किसी देवल—स्थान वा धर्म्म-सम्प्रदाय में नहीं ले जा सके, और वह विचारा मर गया। इस मनुष्य के पास ईसा के रक्त से रञ्जित टिकट नहीं था। तो क्या यह मनुष्य सदा के लिये नरक में डाल दिया जायगा? अरे! जो परमेश्वर ऐसा करता है वह क्या अत्यन्त प्रति हिंसा-परायण (प्रतिकार परायण वा बदला लेने वाला) नहीं है? न्याय के नाम में इस प्रकार का बयान करने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। वेदान्त के अनुसार, मर जाने के बाद किसी मनुष्य का सदा मुर्दा बना रहना आवश्यक नहीं है। प्रत्येक मृत्यु के बाद जीवन है, और प्रत्येक जीवन के बाद मृत्यु। और वास्तव में मृत्यु एक नाम मात्र है। हमारा उसे बड़ा जूजू (bugaboo) बना देना भारी भूल है। उस में कुछ

भी भीषण या द्वेष्य वा गर्हित नहीं है, वह तो दशा का एक परिवर्तनमात्र है।

अच्छा, जब तक तुम इस दुनिया में जीवित हो, ७० या ८० साल तक मान लो, तब तक तुम दीर्घ, दीर्घ जाग्रत अवस्था का उपयोग कर रहे हो। इस दुनिया में जीवन एक दीर्घ, निरन्तर जाग्रत अवस्था है, और जीवन के बाद यह नाम मात्र मृत्यु वेदान्त के मतसे उतने ही दर्जे की एक लम्बी निद्रा मात्र है। वेदान्त के अनुसार यह मृत्यु एक दीर्घ निद्रा है। जिस तरह हर २४ चौबीस घंटे में लग भग तीन या चार घंटे की निद्रा का उपभोग करने के बाद तुम फिर जागते हो, उसी तरह मौत के विश्राम का भोगने के बाद तुम्हें फिर इस दुनिया में जन्म लेना पड़ता है, तुम फिर अवतीर्ण होते या जन्म लेते हो। पुनर्जन्म या फिर देह धारण करना एक झपकी लेने के बाद फिर जागने के समान है।

वेदान्त के अनुसार, मर जाने के बाद मनुष्य तुरन्त उसी स्थल पर पुनर्जन्म नहीं लेता है। जब एक बीज पेड़ से गिरता है, तब उससे तुरन्त नया पेड़ नहीं उग आता है, कुछ देर लगती है। जब कोई मनुष्य एक घर छोड़ता है, तब वह तुरन्त दूसरे घर में नहीं प्रवेश करता, उसमें उसे कुछ देर लगती है। इसी तरह मरने के बाद मनुष्य तुरन्त दूसरी देह नहीं धारण करता है। उसे एक बीच की हालत से होकर गुज़रना पड़ता है, जिसे हम 'मृत्यु' की दशा या दीर्घ निद्रा की दशा कहते हैं। अब इस दशा का क्या हाल है? यह दशा अर्थात् मृत्यु और दूसरे जन्म के बीच की दशा किस प्रकार की है? यह निद्रा की अवस्था है, और

इसमें निद्रा के सब गुण हैं। आप जानते हैं कि जब कोई मनुष्य सो जाता है, तब स्वप्न में वह उसी प्रकार की चीज़ें देखता है जैसी उसने अपनी जागती हालत में देखी थीं। यह साधारण नियम है। कभी कभी इसके अपवाद भी देखने में आते हैं, किन्तु साधारणतः मनुष्य अपने स्वप्नों में उसी प्रकार की चीज़ें देखता है जैसी वह अपनी जाग्रत अवस्था में देखता था। जो लोग विश्व विद्यालयों में परीक्षाओं के लिये पढ़ते हैं, वे राम के इस कथन का अनुमोदन करेंगे, कि जब उनकी परीक्षा बहुत निकट होती है और वे बड़े श्रम से उसकी तैयारी करते होते हैं, तब उन्हें अपने स्वप्नों में प्रायः उसी प्रकार की बातें दिखाई पड़ती हैं और वे उसी तरह का काम करते रहते हैं जैसे काम में वे दिन में लगे हुए थे। जब उनकी परीक्षा हो जाती है और परिणाम की आशा लगाये होते हैं, तथा इच्छा करते हैं कि वे उत्तीर्ण हों, एवम् कृतकार्य उपाधि धारियों की सूची में प्रथम हों, उन दिनों में जब कि वे सन्देह की दशा में होते हैं, तब वे परीक्षा के परिणाम के संबंध में स्वप्न देखा करते हैं। जो लोग किसी विशेष विषय या पदार्थ से प्रेम रखते हैं, वे रात को उसके स्वप्न अवश्य देखते हैं।

जब राम विद्यार्थी था और बी. ए. परीक्षा की तैयारी कर रहा था, तब एक सहपाठी बड़ा खिलंदड़ा जवान था। गाने, नाचने और खेलने में वह अपना समय बिताता था, एक दिन एक सज्जन ने इस मित्र से पूछा कि पढ़ने लिखने में तुम कितने घंटे लगाते हो। उसने मुसकराते हुए कहा "पूरे १८ घंटे।" मित्र ने कहा, "इसका क्या मतलब है? तुम चार या पांच घंटे मेरी मौजूदगी में बरबाद करते हो,

मेरी आंखों के सामने। मैं जानता हूँ कि तुम २४ घंटों में ८ या ६ घंटे सोते हो, और फिर तुम्हें केवल १० या १२ घंटे बच रहते हैं, परन्तु फिर भी तुम कहते हो कि मैं पूरे १८ घंटे पढ़ता हूँ।" युवक ने कहा, "आपने गणित नहीं पढ़ा है। मैं साबित कर सकता हूँ कि मैं पूरे १८ घंटे पढ़ता हूँ।" उस सज्जन ने कहा, "भला, यह कैसे ?" नवयुवक ने कहा, "मैं और यह राम एक ही कमरे में रहते हैं। मैं वास्तव में १२ घंटे पढ़ता हूँ, और वह (राम) २४ घंटे पढ़ता है। ये ३६ घंटे हुए। अब औसत निकाल लो, १८ उसके हिस्से के हुए और १८ मेरे हिस्से के।" भद्रपुरुष ने कहा, "अच्छा, माना कि तुम १२ घंटे पढ़ते हो, परन्तु मैं यह मानने को तैयार नहीं हूं कि राम पूरे चौबीसों घंटे पढ़ता है। यह कैसे संभव है ? मैं जानता हूँ कि राम बड़ा मेहनती विद्यार्थी है, मैं जानता हूँ कि वह अनेक विषयों का अध्ययन कर रहा है, और वह केवल विश्वविद्यालय ही का कार्य नहीं कर रहा है, वह उससे चौगुना फालतू काम भी कर रहा है, तथा अन्य अनेक विषय तैयार कर रहा है, एवं सब तरह के काम कर रहा है, फिर भी प्रकृति के नियम उसे २४ घंटे नहीं काम करने देंगे।" इस सहपाठीने समझाना शुरू किया। उसने कहा, "मैं तुम्हें दिखा सकता हूँ कि जब वह भोजन करता होता है तब भी वह अपने चित्त को एक क्षण भी आलस्य में नहीं गँवाने देता। मैं तुम्हें दिखा सकता हूँ कि हर समय उसके पास एक कागज़ रहता है जिस पर कोई न कोई वैज्ञानिक समस्या विचार के लिये होती ही है, कोई गणित या दर्शन शास्त्र का विषय होता है, अथवा कोई पुस्तक या कविता कंठ करने के लिये होती है। वह चाहे कोई कविता लिखता हो या दूसरे किसी प्रकार का काम

करता हो, एक क्षण भी वह अपना नष्ट नहीं करता—भोजन के समय भी। जब वह कपड़े पहनने के कमरे में होता है, तब वह खरिया से दिवाल पर आकृतियां खींचता रहता है। जब वह सोता है तब भी किसी न किसी समस्या को हल करता रहता है, वह सदा उन्हीं विषयों का स्वप्न देखता रहता है जिनमें दिन में उसका चित्त लगा होता है। इस प्रकार उसके चौबीसों घंटे पढ़ने में बीतते हैं।

हां, उसके बयान में कुछ सत्यता थी। जो मनुष्य अपने पूरे १८ घंटे अध्ययन में लगाता है, वह अपने स्वप्नों में भी वही काम कर सकता है जो वह दिन में करता होता है, दूसरी तरह के काम नहीं कर सकता। कभी कभी लोग कहते हैं कि वे अपने स्वप्नों में ऐसी चीज़ें देखते हैं जैसी पहले कभी नहीं देखने में आई थीं। वेदान्त कहता है, "नहीं"। यह एक मनुष्य आता है। वह कहता है कि मैंने अपने स्वप्न में एक दानव देखा। उसका सिर सिंह का था, पीठ ऊँट की थी, दुम सांप की थी, पैर मेंढ़क के थे। वह कहता है कि पहले कभी ऐसा पशु मैंने नहीं देखा था। वेदान्त उससे कहता है, भाई! तुमने मनुष्य देखा है, तुमने सर्प देखा है, तुमने ऊँट देखा है, तुमने मेंढ़क देखा है। और सांप की दुम, सिंह के सिर, ऊँट की पीठ तथा मेढ़क के पैरों को तुमने अपने स्वप्न में एक में मिला कर एक नये पदार्थ की रचना कर ली है। सो वास्तव में हरेक वस्तु जो तुम अपने स्वप्न में देखते हो, और प्रत्यक्ष यह नये प्रकार का दानव रूप पशु, इसे भी तुमने अपनी जाग्रत अवस्था में देखा है।"

जो मनुष्य रूस कभी नहीं गया है, और कभी वहां का हाल नहीं सुना है, वह अपने स्वप्न में सेंटपीटर्स बर्ग (रूस

की राजधानी) कभी नहीं पहुँच जाता। कभी नहीं, कभी नहीं। कभी कोई तत्त्ववेत्ता क्या स्वप्न में चमार का काम करता है ? यदि वह मोची का पड़ोसी भी होता है और मोची को प्रायः अपने स्वप्नों में देखता है, तो भी जूते मुरम्मत करने या टांकने के काम में लगा हुआ अपने को कभी नहीं पाता।

जब कि यह बात है, तब मृत्यु की अपनी दीर्घ निद्रा में आप को क्या आशा करनी चाहिए ? मृत्यु और दूसरे जन्म के बीच का काल, दीर्घ निद्रा का समय, कैसे बीतेगा ? वेदान्त कहता है यह तुम्हारे स्वर्गों या नरकों में बीतेगा, यह तुम्हारे बैकुँठों या रौरव नरकों में बीतेगा। ये बैकुँठ, ये स्वर्ग और नरक क्या हैं ? एक मृत्यु और उसके बाद के जन्म के बीच में पड़ने वाले ये स्वप्न-लोक हैं। यह मनुष्य एक सच्चा ईसाई है, बड़ा ही साधु और धार्मिक जीवन इसने बिताया है, प्रत्येक रविवार को गिर्जाघर जाता रहा है, नित्य शाम को प्रार्थना करता रहा है। प्रत्येक बार भोजन करते समय इसने ईश्वर से कल्याण की प्रार्थना की है, ईसा की सूली (cross of christ) अपनी छाती पर आजीवन इसने रक्खी है, अपने जन्म से मरण तक जितनी देर जागा है, बराबर ईसा का ध्यान किया है, उठते बैठते, सोते जागते हर घड़ी ईसा की पवित्र मूर्ति इसके सामने उपस्थित रही है। इस मनुष्य ने ८० या ९० साल की अपनी जाग्रत अवस्था को ईसा के प्रेम में लगाया है। इसने अपनी सारी चिन्ता ईसा में लगाई है। मृत्यु के बाद ईसामसीह के दक्षिण पार्श्व में अपने को बैठा हुआ देखने की आशा यह करता रहा है, अपनी सारी ज़िन्दगी ऐसा सोचता और स्वप्न

देखता रहा है। कि मृत्यु के बाद फरिश्ते, देवदूत और स्वर्गीय जन मेरा स्वागत करेंगे। वेदान्त के अनुसार, इस प्रकार का पक्का ईसाई मृत्यु के बाद अपने को ईसा के दहने पार्श्व में बैठा पावेगा। ठीक बिलकुल ठीक वह मृत्यु के उपरान्त अर्थात् इस मृत्यु और इस के बाद के जन्म, इन दोनो के बीच की उस दीर्घ, दीर्घ निद्रा में वह अपने को देवदूतों, स्वर्ग के लोगों और फरिश्तों से घिरा हुआ पावेगा कि जो बराबर स्तुति कर रहे होंगे। कोई कारण नहीं है कि वह अपने को उनके बीच में न पावे। वेदान्त कहता है, "ऐ ईसाइयो! यदि तुम भक्त हो, यदि तुम श्रद्धालु और उत्सुक हो, तो तुम अपने धर्म ग्रन्थों के वचनो को पूरा होते पाओगे। किन्तु मुसलमानों और हिन्दुओं को बुरा न कहो (ये मुसलमान बड़े ही उत्सुक, अत्यन्त उत्साही और आप कह सकते हैं, कभी २ परधर्मद्वेषी धर्मोन्मत्त भी हैं)"। किन्तु वही मुसलमान सच्चा मुसलमान है जिसने अपने जीवन की ७० या ८० साल की सम्पूर्ण जाग्रत अवस्था उसी तरह पर विताई है जैसा कि मोहम्मद साहब का आदेश है, जो मोहम्मद साहब का चिन्तन तथा स [illegible]लोकन करता रहा है
और मोहम्मद के नाम में दिन [illegible] के जो [illegible]र नमाज़ पढ़ता
रहा है। जो मोहम्मद के लिये [illegible] है। तुम्हा[illegible] देने को सदा
तैयार रहा है। तब इस प्रकार के [illegible] तुम्हारी स्वप्न[illegible] कि जिस
के जीवन का स्वप्न रहा है मु[illegible] [illegible]हारी स्वप्नावस्था [illegible]
दुनिया के इस सिरे से उस सि[illegible] [illegible]मने प्रकट होती है जो आप को
फैलाना) क्या होगा? प्रकृति [illegible] दिखती है। मान लो कि अपने
बात उसे न होगी। प्रकृति का [illegible] देखते हैं। जाग्रत अवस्था क
अवस्था में हम जिसका स्वप्न [illegible] तुरन्त उस स्थल पर जमा दिया
वही वस्तु हमें स्वप्न में दिखाई दे[illegible] दृष्टिबिन्दु से वह पहाड़) पाँच
[illegible] गया था। वेदान्त कहता है कि
[illegible] को अपने स्वर्ग में अनन्तता से

विहिश्त, आनन्द कानन और हूरों, मद्य की नदियों का स्वप्न वह देखता रहा है कि मौत के बाद जिनकी प्राप्ति का वादा उनके (मुसलमानों के) धर्माचार्य ने किया है। मृत्यु के बाद वैकुंठ के भव्य भवनों और विलसिता की वस्तुओं का स्वप्न वह देखता रहा है। वेदान्त कहता है, प्रकृति में ऐसा कोई नियम या शक्ति नहीं है जो उसे उस प्रकार के बैकुंठ का उपभोग करने से रोक सके जिसका कि वह स्वप्न देखता रहा है। उसको वैसाही स्वर्ग अवश्य देखने को मिलेगा, अपने धर्माचार्य के वाक्यानुसार स्वर्ग में वह अपने को अवश्य पावेगा।

किन्तु वेदान्त कहता है, "ऐ मुसलमानों, तुम्हें कोई हक नहीं है कि इस दुनिया के सब मनुष्यों को, मृत्यु के बाद, अपने धर्माचार्य (पैगम्बर) के हवाले कर दो, उन्हें एक मोहम्मद ही की दया पर छोड़ दो। इसाइयों को उन के विचारों का उपभोग करने दो, उन्हें स्वच्छन्द कर दो, उन सब को,– यूरोप, अमेरिका, पूर्व भारत, जापान, या चीन में कहीं भी वे मरें,– मोहम्मद की दया के अधीन करने की इच्छा न करो। तुम्हें christ धिकार नहीं है कहने का कि,यदि वे मोहम्मद में अपने जन्म से हैं तो ठीक है, अन्यथा उन का अकल्याण ईसा का ध्यान किये निठुरता है। यदि आप हज़रत हरे वड़ा ईसा की पवित्र मूर्ति आप को उसी प्रकार का स्वर्ग है। इस मनुष्य ने ८० या ६० अभिलाषा है । और यही बात स्था को ईसा के प्रेम में लग यदि आप अपने धर्म-सिद्धान्तों चिन्ता ईसा में लगाई है। मृत्यु मृत्यु के बाद आप को उसी पार्श्व में अपने को बैठा हुआ ागी जिस की आप आशा करते रहा है, अपनी सारी ज़िन्दगी स्वर्ग या नरक आप ही पर

निर्भर है। मृत्यु के बाद आप ही स्वर्ग बनाते हैं और मृत्यु के बाद आप ही नरक बनाते हैं। असलियत में स्वर्ग और नरक आप के स्वप्नमात्र हैं, जो स्वप्न कि आप को उस समय सत्य जान पड़ते हैं, इस से अधिक कुछ नहीं। आप जानते हैं कि स्वप्न देखते समय हमें स्वप्न सत्य प्रतीत होते हैं। अतएव ये नरक और स्वर्ग मृत्यु के बाद आप को सच्चे प्रतीत होंगे, किन्तु वास्तव में, असलियत में, स्वप्नों से अधिक ये कुछ भी नहीं हैं।

एक बात और कही जा सकती है। लोग कहते हैं कि हमारे धर्म-ग्रन्थों ने जो वचन हमें दे रक्खे हैं यदि मृत्यु के बाद सत्य उतरें तो हमें सर्वकालीन सुख की प्राप्ति हो। हमारे धर्मग्रन्थ मृत्यु के बाद या तो नित्य कल्याण का या शाश्वत अकल्याण का हमें वचन देते हैं। यह कैसी बात है? वेदान्त कहता है, नित्यता क्या है? आप जानते हैं कि नित्यता एक ऐसी वस्तु है जिस का सम्बन्ध समय, अनन्त समय से है। आप जानते हैं कि जाग्रत अवस्था का समय स्वप्न देश के समय से भिन्न है। तुम्हारी जाग्रत अवस्था में समय एक प्रकार का है और तुम्हारी स्वप्नावस्था में समय दूसरा प्रकार का है। तुम्हारी स्वप्नावस्था में कभी कभी एक ऐसी वस्तु आप के सामने प्रकट होती है जो आप को पाँच हज़ार वर्ष की पुराना दिखती है। मान लो कि अपने स्वप्नों में आप एक पहाड़ देखते हैं। जाग्रत अवस्था के दृष्टि विन्दु से पहाड़ आपने तुरन्त उस स्थल पर जमा दिया है, किन्तु स्वप्नावस्था के दृष्टिविन्दु से वह पहाड़) पाँच हज़ार साल पहले जमाया गया था। वेदान्त कहता है कि अपने स्वप्नों में आप अपने को अपने स्वर्ग में अनन्तता से

पाते हैं; स्वप्न-दर्शी अधिष्ठान के दृष्टि-विन्दु से आप स्वर्ग या नरक में अनन्त काल से रहेंगे, किन्तु जाग्रत-दर्शी अधिष्ठान के दृष्टिविन्दु से नहीं।

यह सत्य है कि इंजील ने जो वचन आप को दिये हैं उन को आप यथार्थ पावेंगे, क्योंकि उस हालत में आप ऐसा सोचेंगे कि हम सदा से इस हालत में रहते आ रहे हैं। वह (हालत) आप के लिये नित्य होगी। स्वप्नदर्शी आत्मा (द्रष्टा) के स्थितिबिन्दु से जो (वस्तु) नित्य है, वही जाग्रत आत्मा के दृष्टिविन्दु से कुछ भी नहीं है।

इस से आप को कुछ पता लग जायगा कि मृत्यु के बाद विभिन्न धर्मों का समन्वय वेदान्त किस तरह करता है।

किन्तु आवागमन के सम्बन्ध में क्या (किस्सा) है? उन लोगों के सम्बन्ध में क्या है कि जो मुक्त पुरुष, या मुक्त आत्मा कहलाते हैं। वेदान्त कहता है कि मृत्यु के बाद हरेक व्यक्ति को स्वर्ग और नरक के इन पड़ावों में होकर नहीं गुज़रना पड़ता है, और न मृत्यु के बाद सब का पुनर्जन्म ही होता है। हां, प्रत्येक व्यक्ति की यह हालत नहीं होती। वे भी हैं जिन्हें मुक्त आत्मा कहते हैं। वे कौन हैं? इन्हें पुनर्जन्म के अधीन नहीं होना पड़ता। वे स्वतंत्र हैं। ये अपने को नरकों या स्वर्गों में क़ैद न पावेंगे। सब स्वर्ग या नरक उन में हैं। सब लोक उन में हैं। कुछ शब्द इन के सम्बन्ध में ज़रूर कहना उचित है।

अपने स्वप्नों में आप दो प्रकार के चमत्कार पाते हैं, द्रष्टा और दृश्य पदार्थ। ये सब नदियां, पहाड़, पहाड़ियां, जिन से आप अपने को सब ओर से घिरा हुआ पाते हैं, पदार्थ हैं। यह स्वप्नदर्शी आत्मा जो अपने को घिरा हुआ

पाता है, यह मुसाफिर, यह तीर्थयात्री, द्रष्टा है। अपने स्वप्नों में आप जानते हैं कि अनेक चीज़ें हैं। उन में से एक है जिसे आप 'मैं स्वयं' कहते हैं, और दूसरी वस्तुएँ हैं जिन्हें आप पदार्थ कहते हैं, जो मुझ से पृथक् हैं। यह जिसे आप 'मैं स्वयं वा आत्मा' कहते हैं द्रष्टा है, और दूसरी वस्तुएँ जिन्हें आप नहीं स्वयं वा अनात्मा कहते हैं पदार्थ हैं। साधारणतः तुम्हारे स्वप्नों में ये विभाग हैं, द्रष्टा और पदार्थ। वेदान्त कहता है कि द्रष्टा और पदार्थ भी आप ही की सृष्टि हैं, सच्चे आत्मा की सृष्टि, जाग्रत आत्मा की सृष्टि हैं। कोषकार (lexicographer) डाक्टर जोहसन, जो, आप जानते हैं, वाग्मियों (बातचीत करने वालों) का बादशाह (Prince of Talkers) कहलाता था, तर्क में परास्त होना नहीं क़बूल करता था। अन्तिम बात सदा वही कहता था, वा अन्तिम परिणाम उसी के पक्ष में होता था (अर्थात् विरोधी को लाजवाब कर देता था)। किसी ने उस के सम्बन्ध में कहा था कि यदि उस के तमंचे का निशाना चूक जाता तो उस के कुन्दे (butt-end) से वह अपने प्रतिस्पर्धी को गिरा देता वा ज़मीन से चित्त कर देता था। हमेशा वह अपनी ही जीत रखता था, और यदि कभी कोई तर्क में उस से बीस (प्रबल) पड़ जाता, तो उस से बदला निकालने को वह आकाश पाताल एक कर देता था। एक बार उसने स्वप्न देखा कि व्याख्यान वाचस्पति एडमंड बर्क ने उसे तर्क में हरा दिया। जोहसन की प्रकृति के मनुष्य के लिये यह स्वप्न जू जू (nightmare) के समान था। इसने उसे चौंका दिया, इसने उसे जगा दिया। वह बेचैनी की हालत में था, और उसे किसी तरह फिर नींद नहीं आती थी। आप जानते हैं कि चित्त का गुण है कि वह

सदा चैन ढूँढ़ता है और शान्ति चाहता है। जब वह व्याकुल होता है तब वह शान्ति के लिये विकल हो जाता है, कारण यह है कि असली शान्ति उस का घर है, निज घर वह ढूँढ़ा ही चाहे। जिस किसी तरह शान्ति का अन्वेषण उस के (डा० जोहनसन के) लिये ज़रूरी था। उसने इस विचार से अपने को शांत किया, यदि मैं एडमंड बर्क के पास जाऊँ और कहूँ, "बर्क, बर्क! मेरे स्वप्न में किस दलील से तुमने मुझे हराया," तो वह दलील को दोहरा न सकेगा। जब मैं सोया था तब जो प्रबल दलीलें उसने दी थीं, और मेरी जिन दुर्बल दलीलों से मेरी हार हुई, उनको मैं जानता हूँ। मैं दोनों जानता हूँ। मैं विजयी और पराजित दोनों पक्षों को जानता हूँ, किन्तु एडमंड बर्क उसके सम्बन्ध में कुछ नहीं जानता है। इस प्रकार से मेरे ही दिमाग़ से दोनों पक्ष की दलीलें पैदा हुईं, मैं ही स्वयं एक ओर तो एडमंड बर्क प्रकट हुआ और दूसरी ओर पराजित जोहनसन।

सो वेदांत कहता है कि अपने स्वप्नों में आप स्वयं ही एक ओर तो पदार्थ के रूप में प्रकट होते हैं और दूसरी ओर पदार्थ का द्रष्टा बन जाते हैं। वह तुम्हीं स्वयं हो, वह तुम में का असली आत्मा है जो एक ओर तो पहाड़ों, नदियों, जंगलों, पत्तियों, पशुओं और हैवानों के रूप में प्रकट होता है और दूसरी ओर व्याकुल तीर्थयात्री। तुम द्रष्टा हो और तुम्हीं पदार्थ हो।

इस प्रकार वेदान्त के अनुसार, मृत्यु की आप की दीर्घ निद्रा में, आप ही नरक और स्वर्ग हो, और आप ही वह मनुष्य हो जो स्वर्ग भोग रहा है या नरक भुगत रहा है। इस तत्व का अनुभव करो और तुम स्वतंत्र हो जाते हो।

एक नारी थी जिसे वेदान्त का यह ज्ञान था। एक हाथ में अग्नि और दूसरे हाथ में शीतल जल लिये वह सड़क पर जा रही थी। लोगों ने उसके पास आकर पूछा, "एक हाथ में ठंढा पानी और दूसरे में अग्नि ले चलने में तुम्हारा क्या प्रयोजन है?" जिस मनुष्य ने यह प्रश्न किया था वह बड़ा धर्म-प्रचारक (मिशनरी) था। उस नारी ने कहा, "इस अग्नि से मैं आपके स्वर्ग और बैकुँठ में आग लगा दूँगी, और इस जल से मैं आपके नरक को ठंढा कर दूँगी। जो मनुष्य इस ज्ञान को रखता है कि वह स्वयं नरक है या स्वयं स्वर्ग है, उसके लिये आप के ये स्वर्ग और नरक समस्त प्रलोभनों और भयों से रहित हो जाते हैं। वह उनसे परे होता है। आप की इस दुनिया के संबंध में क्या है, और इस जाग्रत अवस्था का क्या हाल है जिसके आप इतने मज़े लूटते हैं? वेदान्त सिद्ध करता है कि यह स्थूल (ठोस) मालूम पड़ने वाली दुनिया भी, यह कठोर कठिन दुनिया भी असत्य है, तुम्हारे स्वप्नों से भिन्न नहीं है। भेद केवल दर्जे का है, न कि गुण (जाति) का। तुम्हारी जाग्रत दुनिया भी एक स्वप्न है, एक ठोस वा घनीकृत स्वप्न है, तथा वेदान्त कहता है कि तुम्हारी इस सुदृढ़ प्रतीत होने वाली दुनिया में द्रष्टा और पदार्थ तुम्हारे सच्चे आत्मा की सृष्टि हैं और अधिक कुछ नहीं। वह तुम्हारी सच्ची आत्मा ही है, जो एक ओर तो नगर, कसबे, नदियां, तथा पहाड़ बन जाती है, और दूसरी ओर इस दुनिया का एक भूला भटका वा निराश्रय बटोही, एक तीर्थ यात्री बन जाती है। तुम्हारी जाग्रत अवस्था में भी जो द्रष्टा के रूप में प्रकट होता है वही पदार्थ है, और जो पदार्थ के रूप में प्रकट होता है वही द्रष्टा है।

मृत्यु का अर्थ केवल द्रष्टा का दब जाना (या विराम

लेना) है, और पदार्थ का नहीं। तुम स्वप्न देख रहे हो। मान लो कि अपनी स्वप्नावस्था में तुम अपने को बर्कले में पाते हो, किन्तु वास्तव में तुम सैन फ्रांसिस्को में सोये हुए हो। वहां तुम्हारे स्वप्न में बर्कले क्या था और बर्कले से सम्बन्ध रखने वाले सब दृश्य क्या थे? वे पदार्थ थे और तुम बर्कले में होने वाले द्रष्टा थे। अब तुम जानते हो कि कभी २ हमें दोहरी निद्रा आती है, कभी २ हमें नींद में नींद आती है, ठीक वैसे ही जैसे कि चक्र-व्याज (compound interest) होता है, और इसी तरह यहां स्वप्न में स्वप्न या दोहरा स्वप्न होता है। यदि तुम्हें बर्कले में निन्द्रा आती है, तो यह दोहरी निद्रा का दृष्टान्त है। क्या होता है? तुम फिर जागते हो। कभी २ स्वप्नों में हम एक स्थान पर सो जाते हैं और एक ही निरन्तर स्वप्न में फिर जाग पड़ते हैं। इसी तरह यहां तुम लेटे हुए थे और स्वप्न में तुम अपने को बर्कले में पाते हो। बर्कले पदार्थ था और तुम द्रष्टा थे। द्रष्टा सो गया, पदार्थ बर्कले वही बना रहा, द्रष्टा दबक गया और फिर उठा। तुमने अपने को फिर बर्कले में पाया, किन्तु तुम्हारी नींद ठीक जैसी की तैसी जारी है। बर्कले से आप लॉज़ेंजिलस Los Ageles गये। वहां तुम अपने एक प्रिय मित्र के घर में ठहरे, और फिर सो गये। वहां लॉज़ेंजिलस Los Angeles तुम्हारे मित्र का मकान इत्यादि पदार्थ थे और तुम द्रष्टा थे। वहां द्रष्टा दब या सो जाता है और फिर उठता है। लॉज़ेंजिलस में एक झपकी लेने के बाद तुम लिक आवज़र्वेटरी (Lick Observatory) को जाते हो। लिक आवज़र्वेटरी (वेध शाला) में भी आप एक झपकी लेते हैं। लिक आवज़र्वेटरी पदार्थ थी और आप द्रष्टा थे। कुछ देर के लिये द्रष्टा दब जाता या विराम लेता है, और फिर उठता है। लिक आवज़-

बैटरी से आप ग्रीष्मावास (Summer resort) को जाते हैं, और आप जब वहां थे तो और कोई आप के कुटुम्ब का आता है और आप को जगा देता है। यहां आप ही ग्रीष्मावास थे और आप ही उस ग्रीष्मावास का सुख भोगने वाला मनुष्य भी। जब आप जाग पड़ते हो, द्रष्टा और पदार्थ दोनों चल बसते हैं वे दोनों गायब हो जाते हैं। द्रष्टा और दृश्य दोनों ही लुप्त हो जाते हैं। किन्तु जब आप स्वप्न देख रहे थे, तब केवल द्रष्टा दबक गया था और पदार्थ बन रहे थे। तुम असलियत में नहीं जागे थे।

अब इस दृष्टान्त को घटाइये। वेदान्त के अनुसार यह विश्व, यह विशाल संसार भी एक स्वप्न है। इस विशाल दुनिया के स्वप्न में सब देश, काल, वस्तु, यह समस्त विश्व जिसे आप बाहर देखते हैं, पदार्थ हैं; और जिसे आप "मेरा शरीर", मेरा तुच्छ अपना आप कहते हैं, वह भी पदार्थ है। जब एक साधारण मनुष्य मर जाता है, तब क्या होता है? माया या अविद्या का लंबा स्वप्न नहीं भंग होता है, किन्तु जैसा का तैसा बना रहता है। वह मरता है। मृत्यु का अर्थ केवल द्रष्टा का दबक जाना या दूर हो जाना है, पदार्थ वहीं का वहीं बना रहता है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। सो जब एक मनुष्य यहां मरता है, वह दूसरे जन्म में फिर जगता है। वह वही संसार अपने इर्दगिर्द पाता है जिस से उस का मरते समय प्यार था। मान लो कि इस दूसरे जन्म में वह ८० या ६० साल जीता है, और फिर मर जाता है। तब फिर हम देखते हैं कि दूसरे जन्म में जो बर्कले या लौज़ेंजिलस के तुल्य था, पदार्थ वहीं बना रहा और केवल द्रष्टा कुछ देर के लिये दबका (लुप्त) रहा। परिणाम यह कि कुछ समय के बाद वह फिर पैदा

हुआ है। तीसरी ज़िन्दगी में वह ७० या ८० वर्ष जीता है, और तदुपरान्त फिर मर जाता है। पदार्थ जो लिक वेधगृह (Lick Observatory) के समान था, वही बना रहता है; द्रष्टा दबक जाता वा तिरोधान हो जाता है, और पुनः प्रकट होता है इस प्रकार यह जन्म और मृत्यु, जन्म और मृत्यु का सिलसिला तब तक जारी रहेगा, जब तक द्रष्टा और दृश्य दोनों साथ ही न दब जायँगे वा न लुप्त हो जायंगे। जब तक दुनिया आप को अपने से भिन्न मालूम पड़ती है, तब तक इस संसार में आप एक क़ैदी हैं, आप सदा इस आवागमन, जन्म और मृत्यु के पहिये में बंधे रहेंगे। यह (पहिया) तुम्हारे इर्दगिर्द घूमता है, और तुम्हें कुचलता ही रहेगा, तुम्हें ऊपर लावेगा और नीचे ले जायगा। आप को कभी कोई विश्राम या शान्ति न मिलेगी।

अब वेदान्त कहता है। जो बच जाता है वह अपने आप ही में द्रष्टा और पदार्थ को पाता है। जब जागने पर हमें डाक्टर जाह्नसन की तरह ज्ञान की उपलब्धि हो जाती है कि हमीं स्वप्न के द्रष्टा हैं, और हमीं पदार्थ, तब हम मुक्त हो जाते हैं। दुनिया मेरा शरीर है और सम्पूर्ण विश्व मेरा शरीर है, जो कोई ऐसा कह सकता है वह आवागमन के बन्धन से मुक्त है। वह कहां जा सकता है? वह कहां आ सकता है? कोई स्थान ऐसा नहीं है जो उस से परिपूर्ण न हो, वह तो एक अनन्त है। कहां वह जायगा? कहां वह आवेगा? विश्व ब्रह्माण्ड उस में है। वह प्रभुओं का प्रभु है, आवागमन के बन्धन से मुक्त है। पूर्वीय भारत का हरेक बच्चा माता के दूध के साथ इस एक इच्छा को पीता है कि "मुझे ऐसा अनुभव हो कि मैं आवागमन के अधीन न रह सकूं, मैं (जन्म-मरण से) बच जाऊँ, और ईश्वरीय चेतना

(ईश्वरी-ज्ञान) में पूर्ण आनन्द तथा कल्याण की प्राप्ति करूँ"।

मिलटन की जीवनी में एक महिला के सम्बन्ध में, जो उस की स्त्री थी, एक बड़ी सुन्दर कथा दी हुई है। उस (स्त्री) ने स्वप्न में अपने पति को देखा और उस का हृदय पति के लिये छटपटाने लगा। उस ने उस को अंक में भर कर (गले लगा कर) कहा, "मेरे स्वामी! मैं सर्वथा तुम्हारी हूँ।" ठीक इसी क्षण उस की आँख खुल गई, और उसने देखा कि वह कुत्ता जो उसी के पलंग पर सोया हुआ था अपना शरीर उस के शरीर में सटा रहा है। कुत्ता बिस्तरे से उछल कर ज़मीन पर चला गया। वास्तव में कुत्ते की दाब या लिपट उसे स्वप्न में अपने पति की दाब या लिपट मालूम हुई थी। यदि कुत्ते ने अपनी देह और अधिकाधिक दबाई होती तो उसे (स्त्री को) एक महान् हिमालय अपनी छाती पर प्रतीत होता। और वेदान्त कहता है, जब तक अविद्या का कुत्ता, मायाका कुत्ता तुम्हें नीचे दबाता रहता है, तब तक तुम्हारे स्वप्न निरन्तर अच्छे से बुरे और बुरे से अच्छे बदलते रहते हैं, कभी तुम्हें पति और कभी तुम्हें प्रबल हिमालय दबाता है। आँसू और मुसक्यानके बीचमें तुम सदा लटकनकी तरह झूलते रहोगे, संसार का तुम्हारे दिल पर बड़ा बोझा पड़ेगा, तुम्हारे लिये चैन का नाम न होगा। वेदान्त कहता है, "अविद्या के इस कुत्ते से अपने को छुटाओ, अपने को सर्वशक्तिमान परमेश्वर बनाओ, अपने को **वह** बनाओ, **उसे** अनुभव करो और तुम फिर स्वाधीन हो।"

हज़ारों रूपों में चाहे तू चकित करे,
तथापि ऐ एक प्यारे! मैं तुझे ठीक पहचानता हूँ,
तू अपने चेहरे को चाहे जादू से छिपावे, इत्यादि।

कच्चा-प्रश्नों के उत्तर ।

गोल्डेन गेट हाल, रविवार, २४ जनवरी १९०३,

महिलाओं और सज्जनों के परिवर्तन-शील रूपों में अमर स्वरूप ।

प्रश्न—छोटे बच्चे क्यों मरते हैं ?

इन प्रश्नों पर विस्तार पूर्वक विचार करने का हमें समय नहीं है, किन्तु केवल उत्तर की ओर संकेत करेंगे ।

उत्तर—यह एक पुस्तक किसी की रची हुई है । इस पुस्तक में अनेक अंग्रेज़ी वाक्य हैं, और उन के अलावा, कहीं कहीं संस्कृत पद्य या वाक्य उद्धृत किये गये हैं । आप जानते हैं कि जिस क़लम से हम अंग्रेज़ी लिखते हैं उस से विभिन्न प्रकार की क़लम की ज़रूरत हमें संस्कृत लिखने के लिये पड़ती है । अतएव जब कोई ग्रन्थकार अंग्रेज़ी लिखता है, तब वह एक प्रकार की क़लम का प्रयोग करता है, और जब वह संस्कृत लिखता है तब उसे वह क़लम बदलनी पड़ती है, और इसी तरह (अन्य भाषा के लिखते समय) । इसी प्रकार जब तक तुम इस एक सांसारिक शरीर में रह रहे हो, तब तक तुम अपने इस शरीर का उसी तरह व्यवहार करते हो जिस तरह तुम एक कलम से काम लेते हो । इस शरीर का तुम तभी तक धारण या शासन करते हो जब तक इस से तुम्हारा काम चलता है । जब देह इतनी बूढ़ी और रोगी हो जाती है कि फिर उस से तुम्हारा काम नहीं चलता, तब तुम उसे दूर फेंक देते हो,

तुम उसी तरह दूसरा शरीर धारण कर लेते हो जिस तरह कपड़े पुराने हो जाने पर तुम उन्हें बदल कर दूसरे कपड़े धारण कर लेते हो। इस में कुछ भी भयंकर बात नहीं है। यह तो बिलकुल स्वाभाविक है।

बच्चे क्यों मरते हैं? यह एक मनुष्य जिस की विभिन्न प्रकार की इच्छाएँ हैं। एक समय आता है जब वह विशेष प्रकार की इच्छाएँ बदल जाती हैं और दूसरी या विभिन्न प्रकार की इच्छाएँ हो जाती हैं। उदाहरण के लिये, एक मनुष्य अमेरिका के किसी नगर में बहुत काल तक रहता है। वह ऐसा साहित्य पढ़ता है, ऐसी पुस्तकों का अध्ययन और चिन्तन करता है कि उस की आन्तरिक इच्छाएँ और वृत्तियां बदल जाती हैं। मान लो कि उसका मन पूर्वीय रंगमें रंग जाता है, अर्थात् हिन्दू हो जाता है। वह अपना अमेरिकन धंधा कुछ दिनों तब तक किये जाता है, जब तक उस के समस्त आन्तरिक भाव और इच्छाएँ उस की बाहरी इच्छाओं से बिलकुल न्यारी नहीं हो जातीं। अब वह अमेरिका का नहीं रह गया; वह भारत का हो गया है और भारत में उसे पैदा होना चाहिये। साथ ही एक धनी पुरुष जो उसे रुचता है, उस के साथ रहने का वह बड़ा इच्छुक है। मान लो, सैनफ्रांसिस्को के नगर-पति या किसी और बड़े आदमी से लगाव होने की उस की जो इच्छा थी वह उतनी प्रबल नहीं थी जितनी भारत में जन्म लेने की अभिलाषा। अब इस पहली इच्छा का पूर्ण होना आवश्यक है, और दूसरी इच्छा का भी। इस का निपटारा कैसे हो? परिस्थिति ऐसी है कि वह उस का अपने उस मनुष्य से सम्पर्क न होने देगी जिस से उसे अति स्नेह है। इस लिये

वह मरता है, तथा अमुक अमुक नगर-पति (मेयर) के पुत्र के रूप में, या जिस बड़े आदमी ने उसे आकृष्ट किया था, उस का लड़का हो कर पैदा होता है। इस मनुष्य से, जिसने उसे आकृष्ट किया था, उस का तब तक सम्बन्ध बना रहता है, जब तक रहने की अवधि की, या इस प्रिय पुरुष से लगाव की समाप्ति नहीं हो जाती। इस के बाद अब उसे भारत में पैदा होना है, ताकि दूसरी संचित इच्छाएँ परिपूर्ण हों। यह कारण है बच्चों के मरने का।

इस एक (व्यक्ति) से पिता या माता की हैसियत से सम्बन्ध होने की इच्छा अंग्रेज़ी अक्षरों में लिखी हुई एक बड़ी किताब में एक संस्कृत पंक्ति के तुल्य है। इस तरह जो बच्चे छोटेपन में ही मर जाते हैं, वे उन किताबों में, जो निरानिर किसी विदेशी भाषा में नहीं लिखी हुई हैं, प्रमाण की पंक्तियों के समान हैं।

प्रश्न—कृपया नेकी और बदी में प्रभेद (फ़र्क़) की रेखा बताइये।

उत्तर—यह एक सीढ़ी है। यदि तुम सीढ़ी पर ऊपर चढ़ो, तो वह नेकी है, और यदि तुम सीढ़ी पर नीचे उतरो, तो वह बदी है।

गणित विद्या में हमें विभिन्न समपदस्थ सूत्र (co-ordinate axioms) मिलते हैं। किसी सूत्र का कोई ऐसी स्थित नहीं है जिसमें वह अपने आप से धन या ऋण (positive or negative) कहा जाता हो। धन और ऋण तो सम्बन्धवाची या सापेक्ष (relative) शब्द हैं।

इसी तरह वेदान्त के अनुसार नेकी और बदी सापेक्ष शब्द हैं। ऐसा कोई बिन्दु नहीं है जहां पर तुम यह कह

सको कि यहां बदी रुक जाती है और नेकी शुरु होती है।

यह एक रेखा है जिसका शीर्ष (vertex) गणित में य है। किसी बिन्दु की गति यदि एक ओर को होती है तो धन कहलाती है और दूसरी अथवा विपरीत ओर को होती है तो ऋण कहलाती है। किन्तु बिन्दु की वही स्थिति ऋण के स्थित बिन्दु से धन कही जा सकती है, और दूसरी ओर से या धन के स्थित बिन्दु से ऋण कही जा सकती है। इसी तरह से यदि आप किसी विशेष प्रकार के कार्य से आगे को और उपर को बढ़ रहे हो, यदि आप सत्य के निकट पहुँच रहे हो, तो वह नेकी हो जाती है। यदि किसी विशेष प्रकार के कार्य से आप सत्य से भटक जाते हो, तो वह कार्य आप के लिये विष है। यदि विवाह सम्बन्ध से आप विश्व-प्रेम के, सार्वभौम प्रकाश के, जो संसार में व्याप्त है, निकट पहुँच रहे हैं, तो विवाह बन्धन आप के लिये अच्छे हैं। यदि विहाव-बन्धन से आप विश्व-प्रेम और विश्व-प्रकाश के निकट नहीं पहुँच रहे हैं, तो ओह! वे तुम्हारे लिये विष हैं, वे पापमय हैं, तब तो विवाह-बन्धन तुम्हारे लिये अभिशाप (curse) हैं।

वेदान्त के अनुसार हरेक व्यक्ति को इन पाशविक इच्छाओं में होकर निकलना पड़ता है। यह कर्म का सिद्धान्त है। विकासवाद के ढर्रों पर सब लोग उन्नति कर रहे हैं, विकसित हो रहे हैं, आगे और आगे जा रहे हैं।

कुछ लोग ऐसे हैं जो हाल ही में पशु-शरीर से आये हैं और मानव शरीर में पग रक्खा है। उनमें पाशविक अभि-लाषाओं की प्रबलता होना अनिवार्य है। उन्हों ने हाल ही में भेड़ियों, चीतों, कुत्तों, शूकरों इत्यादि के शरीर छोड़े हैं, और

उनमें उन इच्छाओं का अधिक होना ठीक ही है। जड़ता वा तमस् के नियम (Law of Inertia) से इतने तक तो सीधी रेखा में प्रत्येक व्यक्ति की गति सदृश रहती है।

यदि जड़ता का नियम इस दुनिया से हटा लिया जाय, तो दुनिया अस्त व्यस्त दशा में हो जाय। यदि जड़ता का नियम हटा लिया जाय तो वे लोग जो पशुओं की योनियों से आये हैं पाशविक प्रकृति के ही बने रहें। हमें इन लोगों की निन्दा वैसे ही नहीं करना चाहिये जैसे कि बहती नदियों से हम घृणा नहीं करते। हमें कोई हक नहीं है कि उन्हें हम पापी कह कर घृणित समझें। जिन लोगों को हम दुष्ट या दोषी कहते हैं, उनसे घृणा करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। इन पापी कहे जाने वालों से प्रेम करने का हमें अधिकार है। ईसा कहते हैं (Love the sinner) "पापी पर प्रेम करो"। यही वेदान्त स्पष्ट करता है कि इनसे घृणा करने का कोई युक्ति संगत कारण नहीं है। उनके लिये पापी होना स्वाभाविक है।

अपने आप से ये लोग अपना लक्ष्य बना ही क्या सकते हैं? उन्हें बढ़ना होगा। जड़ता का कानून अकेला ही नहीं इस दुनिया का शासन कर रहा है। यदि वे जीवित हैं तो उन्हें अवश्य उस जड़ता को जीत लेना होगा।

मौलिक जड़ता (original Inertia) में शक्ति जो परिवर्तन पैदा करती है उसी से सब ताक़त जानी जाती है। यदि प्रगति (हरकत) की मौलिक रेखा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, तो वहां कोई शक्ति नहीं है, कोई जीवन नहीं है। अब ये लोग यदि जीवित कहलाने की इच्छा रखते हैं, तो उन्हें अवश्य वह जीवित शक्ति प्रकट करना चाहिये, अपने

को उलझन से निकालना चाहिये, अपने में शक्ति का परिवर्तन करना चाहिये, और शक्ति या आत्मिक-शक्ति के इस परिवर्तन से उन्हें अपनी स्वाभाविक प्रकृति को पूर्ण रूप से बदलना होगा। यहाँ 'स्वाभाविक' शब्द आया है। इसे समझा देना चाहिये क्योंकि यह 'स्वाभाविक' शब्द हजारों को नहीं, लाखों को भटकाने का कारण होता है, (इसके नाम से) सब तरह की बुराइयों और संकटों का पोषण और प्रोत्साहन होता है।

कुछ लोग सोचते हैं कि 'स्वाभाविक' का अर्थ चित्त में आने वाली सब पाशविक इच्छायें और विकार हैं। वे कहते हैं "हमें अपने मनो-विकारों के घोड़े छोड़ देने चाहियें, हमें उन बागों को छोड़ देना चाहिये जो हमारे सच्चे आचरण को क़ाबू में रखती हैं, हमें स्वाधीन होने दो।' किन्तु इस स्वाधीनता से सांसारिक, पाशविक जीवन के सिवाय और कुछ भी अभिप्रेत नहीं है।

यहां एक खिलौना-गाड़ी है, पूरी तेज़ी से दौड़ रही है। खींचने वाली ताकत को हटा लो, कुछ दूर तक गाड़ी अपने आप ही दौड़ेगी। क्यों? कारण यह है कि गाड़ी का उस तरह दौड़ना स्वाभाविक है, क्योंकि शक्ति या उस (गाड़ी) का वेग चाहता था कि वह आगे और आगे बढ़े। यह स्वाभाविक है। दूसरे शब्दों में स्वाभाविक का अर्थ वा तमस् है, औरजाड़ता चाहती थी कि गाड़ी उस ओर दौड़े। जब कोई ढेला आकाश में फेंका जाता है तो जड़ता के कारण उस का आगे और बढ़ना स्वाभाविक है। लड़कों का लट्टू अपनी तेज़ी या वेग से गिन गिन घूमता रहता है। उस के लिये गिन-गिन घूमना स्वाभाविक है।

इसी तरह जब पशुओं की योनियों में थे, तब तुम एक विशेष दिशा में दौड़ते रहे थे। जब पशुओं के शरीरों में थे, तब पाशविक विकारों को तृप्त करने की ओर लोग दौड़ते थे। यह स्वाभाविक था। तब स्वभावतः वह (पाशविक विकार) तुम्हें दिये गये थ, और साथ ही ये कार्य तुम्हारे लिये बिलकुल उपयुक्त थे, क्योंकि उन कामों और इच्छाओं से तुम्हारा उत्थान हुआ था, वे कार्य और इच्छायें तुम्हारे लिये नेकियां थीं, उन के द्वारा तुम उठे, तुम्हें आवश्यक ज्ञान की प्राप्ति हुई।

कोई कुत्ता यदि कुत्तेपनके काम करता है तो उसे पापी न कहो, न सुअर को सुअरपन के काम करने के लिये पापी कहो।

जब तुम मनुष्य के शरीर में आये, तब तुम में वैसी ही पाशविक इच्छाओं का होना स्वाभाविक था कि जिन के तुम पशुओं की योनियों में अभ्यासी थे। यह एक मनुष्य-शरीर है ये कार्य स्वभावतः होते हैं, और इन का कारण है तुम्हारी जड़ता। जब तुम पशुओं की योनियों में थे तब के स्वाभाविक कार्य इन का हेतु हैं। इस तरह पर 'स्वाभाविक' शब्द का अर्थ तमोगुण के सिवाय और कुछ भी नहीं है। किन्तु जड़ता तुम्हें तुम्हारी सच्ची प्रकृति दिखाने या प्रकट करने वाली वस्तु नहीं है। वह तुम्हारे में मृतक तत्वों को प्रकट करती है, वह ईश्वरत्व वा देवत्व को नहीं प्रकट करती।

मनुष्य तभी वास्तविक मनुष्य है जब वह इस तमस को जीतता और मिटा देता है, जब वह इस से ऊपर उठता है। ये पाशविक वासनाएँ और विकार पशुओं के लिये बिलकुल स्वाभाविक हैं और कुछ प्रकार के ऐसे मनुष्यों के

लिये भी स्वाभाविक हैं कि जिन्हों ने अभी अभी नर-देह में पैर रक्खा है। ये इन इच्छाओं का अनुसरण करने में चाहे स्वतंत्र हों, किन्तु कुछ काल के बाद उन्हें इन को छोड़ना होगा, इन से ऊपर उठना होगा, इन से आगे बढ़ना होगा।

एक कहानी सुनिये जो बेमौक़े न होगी। भारत वर्ष में तुलसीदास नाम के (राम के एक पूर्व पुरुष) एक महात्मा थे। वे अपनी स्त्री से बहुत प्रेम करते थे। उन्हें अपनी स्त्री पर जितना प्यार था उतना पहले कभी किसी को अपनी स्त्री पर न हुआ होगा। एक बार उन की स्त्री को अपने पिता के घर जाना पड़ा, जो दूसरे गांव में स्थित था, महात्मा जिस गांव में रहते थे उस से सात या आठ मील की दूरि पर वह था। तुलसीदास जी स्त्री-वियोग न सह सके, और इस लिये अपना घर छोड़ कर स्त्री की खोज में गये। रात को ग्यारह बजे के लगभग उन्हों ने उस (स्त्री) के प्रस्थान की बात सुनी और अपने आततायीपन (desperation) में वे पागल की तरह अपने घर से दौड़े। दोनों गांवों के बीच में एक नदी पड़ती थी, और नदी की तेज़ धारा के कारण रात के समय उस पार करना बड़ा कठिन था, और इस के सिवाय उस समय में ओई व्यक्ति (सहायक) मिलता नहीं था। नदी के तट पर तुलसीदास जी को एक सड़ी हुई लाश मिली। अपने उन्मत प्रेम में, अपनी स्त्री के पास पहुँचने के आततायीपन में, उन्हों ने कसकर लाश पकड़ी और पर कर नदी पार हो गये, कुशल पूर्वक उस पार पहुँच गये। दौड़ते २ जब वे उस घर पर पहुँचे, जहाँ उन की स्त्री थी, तो सब द्वार बन्द मिले। वे न तो भीतर घुस सके, और न किसी नौकर

या घर वाले को जगा सके, क्योंकि वे सब कोई अत्यन्त भीतरी कमरों में सो रहे थे। अब वे क्या करते? आप जानते हैं कि लोग कहते हैं, राह में यदि नदी हो तो प्रेम उसे तैर जाता है, राह में यदि पहाड़ हों, तो प्रेम उन पर चढ़ जाता है। सो प्रेम के पँख पर तुलसीदास को अपनी स्त्री के पास पहुँचना था। जब उन का दिमाग व्याकुल (भ्रान्त) हो रहा था, तब उन्हें मकान से लटकती हुई कोई वस्तु दिखाई पड़ी, जिसे उन्हों ने रस्सी समझा। उन्हों ने विचारा कि मेरी स्त्री मुझ से इतना अधिक प्रेम करती है कि मेरे ऊपर चढ़ने के लिये उसने रस्सी लटका रक्खी है। वे बहुत खुश हुए। यह रस्सी नहीं थी किन्तु लम्बा साँप था। उन्हों ने साँप को धर पकड़ा, और साँप ने उन को काटा नहीं। और इस प्रकार से वे घर की ऊपर की मंज़िल पर चढ़ गये, और जिस कमरे में उन की स्त्री सोई हुई थी, उस में वे जा दाखिल हुए। वह चकित होकर उठी और बोली, "तुम यहां कैसे पहुँचे, यह बड़े आश्चर्य की बात है?" वे आनन्दाश्रु गिराते हुए बोले, "ऐ भद्रे! स्वयं तुम्हीं ने मेरे लिये यहां का मार्ग इतना सरल कर दिया था। क्या तुम ने नदी के पार आने को मेरे लिये एक प्रकार की डोंगी तट पर नहीं रख दी थी, और ऊपर चढ़ने के लिये क्या तुम ने दिवाल पर रस्सी नहीं लटका रक्खी थी"? वे विक्षिप्त थे, प्रेम ने उन्हें पागल कर दिया था। स्त्री करुणा और हर्ष के आंसू बहाने लगी। वह विद्वान् नारी थी, दिव्या बुद्धि की देवी थी। उसने कहा, "हे देव (दिव्यस्वरूप)! हे प्राणप्यारे! इस प्रत्यक्ष मुझ में, मेरे इस शरीर में, जो दिव्य तत्त्व (आत्मा) है, जो इस का आधार और रक्षक है, उससे यदि आप को इतना ही अधिक प्रेम होता, तो आप ईश्वर हो जाते,

तो आप संसार के सब से बड़े महात्मा होते। आप भूमंडल के सर्वश्रेष्ठ सिद्ध होते, समग्र विश्व के आप पूजनीय प्रभु होते।

स्त्री जब उन्हें ईश्वरत्व की भावना का उपदेश दे रही थी, और उन्हें सिखा रहा थी कि परमेश्वर में और मुझमें अभेदता है, तब बोली, "ऐ प्यारे पति! क्या तुम्हें मेरे इस शरीर से प्रेम है। यह शरीर तो केवल अस्थायी है। इसने तुम्हारा घर छोड़ा, और यह इस घर चला आया। इसी तरह यह देह आज या कल्ह इस लोक को भी छोड़ सकती है। यह देह आज ही बीमार हो सकती है और एक क्षण में इसकी सारी सुन्दरता रफूचकर हो सकती है। अब देखिये, वह कौन चीज़ है जिसने मेरे कपोलों को खिला रक्खा है, मेरे नेत्रों की ज्योति किसकी दी हुई है, मेरे शरीर की कान्ति कहां से आई, वह कौन वस्तु है जो मेरे नयनों के द्वारा चमकती है, मेरे केशों को यह सोनहला रंग किस ने प्रदान किया है, मेरी इन्द्रियों और मेरी देह में जीवन और प्रकाश तथा कर्मण्यता किसकी करतूत है? देखो प्यारे! तुम्हें मोहित करने वाला यह चर्म, मेरा यह शरीर नहीं है। कृपया ध्यान दीजिये, कृपया देखिये, वह कौन है? वह मेरा सच्चा ईश्वर, आत्मा है जो तुम्हें मोहित और वशीभूत तथा आसक्त करता है। वह मुझ में परमेश्वर है, और कोई नहीं। वह परमात्मा है, और कुछ नहीं। वह, वह परब्रह्म है, सर्वेश्वर मेरे अन्दर है, और कुछ नहीं। उस परमेश्वर का अनुभव करो, सर्वत्र उस परमेश्वर को देखो। क्या वही परमात्मा, परमेश्वर नक्षत्रों में, चन्द्र में नहीं मौजूद है, सीधा तुम्हारी ओर नहीं देख रहा है?"

तुलसीदास जी विषयसेवा, भोगवासनाओं, तथा सांसारिक अनुरागों से ऊपर उठ गये। उन्हें ने, जिन्हें पहले एक स्त्री ही से असाधारण प्रेम था, अब उस परमात्मा को, उस प्यारे स्वरूप को संसार में सब कहीं अनुभव किया। यहां तक कि यह (तुलसीदास) परमेश्वर का एक प्रेमी, परमात्मा का मतवाला महात्मा, और शुद्ध पवित्र हुआ एक दिन जंगल में जाते जाते एक ऐसे आदमी के पास पहुँचा जिसके हाथ में कुल्हाड़ी थी और जो सरो के एक सुन्दर पेड़ को काटने ही वाला था। जब कुल्हाड़ी की चोटें सरो के सुन्दर वृक्ष की जड़ों पर पड़ने लगीं, तब तुलसीदास जी को मूर्छा आने वाली ही थी। वह झपट कर उस मनुष्य के पास गया और बोला 'तुम्हारे ये वार मुझे चोट पहुँचाते हैं, वे मेरे कलेजे को छेद रहे हैं। दया करके ऐसा न करो।" उस मनुष्य ने पूछा "महात्मा! यह कैसे?" तुलसीदास जी ने कहा, "महाशय! यह सरो, यह सुन्दर पेड़ मेरा प्यारा है, इस में मैं अपना सच्चा परमात्मा देखता हूँ, इसमें मुझे परमेश्वर दिखाई देता है"।

अब परमेश्वर उसकी स्त्री, उसका बच्चा, उसकी माँ, उसकी बहन और उसका सब कुछ होगया। उसकी सारी शक्ति, उसका सम्पूर्ण प्रेम परमेश्वर के चरणों में निछावर होगया; परमात्मा को, सत्य को समर्पित होगया, और तुलसीदास जी ने उस मनुष्य से यों कहा, "मुझे वहां अपना प्यारा दिखाई देता है, मैं अपने प्यारे परमेश्वर पर चोटें पड़ते नहीं सह सकता।"

एक दिन एक मनुष्य एक बारहसिंगा या हिरन को मारने वाला था। पवित्रात्मा महात्मा (तुलसीदास जी) ने

उसे देखा। वह (तुलसीदास जी) वहां पहुँचे और अपने को उस मनुष्य के चरणों पर डाल दिया जो बारहसिंग का बध करनेवाला था। उस मनुष्य ने पूछा, "महात्मा! यह क्या बात है"? महात्मा जी बोले, "अरे! दया करके हिरन को बक्श दो, देखो उन खूबसूरत आँखों से मेरा प्यारा देख रहा है। अरे! मेरे इस शरीर को मार डालो, परमेश्वर के नाम में, परमात्मा के नाम में इस शरीर का बलिदान कर दो, मेरे शरीर का बलिदान कर दो, मैं अविनाशी हूँ, किन्तु बक्श दो, अरे! प्यारे को छोड़ दो।"

इस संसार में जो सब मनोहरता तुम देखते हो वह सच्चे परमेश्वर के सिवाय और कुछ भी नहीं है, वही है जो तुम्हारे लिये एक प्यारे के शरीर में प्रकट होता है, वही है जो वृक्षों, पहाड़ों और पहाड़ियों की विभिन्न पोशाक धारण करता है। इसे अनुभव करो, क्योंकि इसी तरह तुम सब सांसारिक विकारों और वासनाओं से ऊपर उठ सकते हो। सांसारिक इच्छाओं के आध्यात्मिक प्रयोग का और इन्हीं के लिये उन के प्रयोग का यही उपाय है। तुम अपनी आध्यात्मिक सत्यानाशी कर रहे हो, तुम पापी हो रहे हो। किन्तु यदि इन का उचित उपयोग करके तुम इन लौकिक लालसाओं को उन्नत करो, तो तुम इन्हीं कामों को पुण्यमय बना सकते हो।

प्रश्न—परिणाम वाद (Theory of Evolution) के अनुसार हम "अपूर्ण" से "पूर्ण" होते हैं। क्या इस से आवागमन सिद्ध होता है?

उत्तर:—इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि इस प्रकार के आवागमन का प्रसारण (विस्तार) प्रारम्भ से

होता है और पीछे लौटने वाला नहीं होता, चाहे कोई मनुष्य कलह कुत्ता भी हो जाय। एक मनुष्य का अपनेको सुअर बनाने का कलह वाला उदाहरण सांकेतिक (काल्पनिक) मामला है; केवल एक पहलू लिया गया था। किन्तु एक बड़े प्रश्न का विचार करते समय हमें दोनों पक्ष ग्रहण करना चाहिये।

विद्यार्थियों को गति-विद्या (Dynamics) पढ़ाते समय हम क्रिया और प्रतिक्रिया के क़ानून को अकेला ही मान लेते हैं, मानो दूसरे क़ानून उस काल में निष्क्रिय हो गये हैं। बाद को हमारी आगे की शिक्षा में हमें उन सब नियमों को (हिसाब में) लेना पड़ता है। इस तरह पिछले व्याख्यान में समय के अभाव से केवल एक अवस्था पर विचार किया गया था। इस प्रश्न पर विचार करते समय दूसरे पहलू पर भी ध्यान देना पड़ेगा।

एक मनुष्य आज चाहे पीछे लौट जाने की चेष्टा करे, नहीं नहीं, बल्कि एक निम्नतर पशु की तरह जीवन बिताने की यथाशक्ति पूरी चेष्टा करे। वह अपने चित्त से सब ऊँची और उत्तम भावनाएँ भले ही निकाल देने की कोशिश करे। यदि उसे अपने को बन्दर बनाने में, और अपनी इच्छाओं को निरा-निर पाशविक बनाने में वस्तुतः सफलता हो जाय, तो दूसरे जन्म में वह अवश्य बन्दर पैदा होगा। किन्तु मनुष्य ऐसा नहीं कर सकता, क्योंकि दूसरी शक्तियां भी हैं, जो उसे रोकती हैं। वे कौन सी शक्तियां हैं? वे हैं जिन्हें रंज, कष्ट और यातना कहा जाता है, वे तनिक भी पीछे लौटा देने के विरुद्ध, अचूक साधन हैं। ये शक्तियां आप को पीछे नहीं लौटने देंगी। इस प्रकार उन्नति सुरक्षित है। परिणाम-वाद का जीवन उन्नति है, और उन्नति होना ही चाहिये,

तथा इस प्रकार से निरन्तर संघर्ष और निरन्तर संग्राम आवश्यक हैं।

इसी तरह, वेदान्त कहता है, तुम्हारे शरीरों में जो संघर्ष हो रहा है, ये सब तकलीफें, चिन्ता, व्यथा, यातना, रंज, खटका, क्लेश, क्षोभ, परेशानी, जिन से तुम्हारे दिल सताये जा रहे हैं, और जो तुम्हारे चित्त में भयंकर संग्राम करती हैं, तुम्हें आगे बढ़ाती हैं। इन शक्तियों के द्वारा, हमें विश्वास है, तुम्हें आगे बढ़ना होगा, और कल यह दिखाया जा चुका है कि इच्छाओं की प्रतिकूलता और पारस्परिक विरोध संग्राम का कारण होता है।

कोई परिस्थिति एक मनुष्य के लिये सुखकर और दूसरे के लिये दुखःकर हो सकती है। उदाहरण के लिये, यदि किसी मनुष्य की तनख्वाह या आमदनी हज़ार रुपये महीने से घट कर पाँच सौ रुपये मासिक हो जाय, तो वह पाँच सौ मासिक उस के लिये चिन्ता और क्लेश का कारण होगा। दूसरी ओर, यदि सौ रुपये मासिक पाने वाला पाँच सौ मासिक वेतन का पद पा जाय, तो वह पद उस के लिये स्वर्ग हो जायगा, सुख, हर्ष और शान्ति का कारण होगा। इसी तरह कोई स्थिति या पद अपने आप से बुरा या भला नहीं कहा जा सकता। अपने आप से सब स्थितियां अनिश्चित हैं, जैसे कोई कर्म अपने आप से पाप पूर्ण या पुण्यमय नहीं हैं। बाहरी गिर्दनवाह और परिस्थिति से आप के सम्बन्ध पर सब कुछ निर्भर है। यदि यह हालत उन्नति की है, तो आप खुश हैं; यदि यह हालत उन्नति की नहीं है, तो आप दुःखी और पीड़ित हैं। इस प्रकार ये इच्छाएँ भिन्न प्रकारों की होने के कारण ऐसी हैं जिन से तुम्हारी उन्नति

होती है, और इन के कारण का सम्बन्ध तथा आगमन पिछली योनियों से नहीं है। ये इच्छाएँ चाहती हैं कि आप जड़ता को जीतें। यदि जड़ता प्रबल की जाय और आत्मिक शक्ति दुर्बल हो जाय, तो आप क्लेश भोगते हैं। यह यातना, यह दर्द एक प्रकार की आध्यात्मिक सूचना है, इस से तुम मानो ठीक राह पर आ जाते हो, और तुम्हें अपनी उच्चतर प्रकृति की याद आ जाती है, और इस प्रकार से तुम्हारे आत्मिक रोग का निवारण होता है। व्यथा और यातना संसार के लिये कल्याण (मुबारक, blessings) हैं। व्यथा और यातना न होती तो बिलकुल उन्नति न होती। इस प्रकार वेदान्त कहता है कि यातना के इस क़ानून के द्वारा आप के पतन की कोई आशंका नहीं है। मत सोचो कि तुम कभी भी नीचे घसीटे जाओगे, कभी भी तुम पिछड़ोगे।

यदि तुम किसी को अपने से बहुत आगे बढ़ा हुआ देखते हो, तो डाह न करो, क्योंकि तुम स्वयं वहीं पर एक दिन होगे। और यदि तुम अपने आप से किसी को बहुत नीचे या पीछे देखते हो, तो उसे तुच्छ न समझो, क्योंकि एक दिन वह भी वहां पर होगा जहां तुम अब हो। दस जन्म पीछे तुम जहां पर थे कुछ लोग आज वहां हैं और कुछ लोग आज वहां हैं जहां तुम अब से दस जन्मों में पहुँचोगे। इस कारण तुम्हें सब पर सार्वभौम प्रेम होना चाहिये, किसी को तुच्छ न समझना चाहिये। जो तुमसे अधिक ऊँचे पर हैं उनसे डाह न करो क्योंकि यथासमय तुम वहां पर होगे।

प्रश्न—यदि व्यथा के नियम के द्वारा हम उन्नति करने को बाध्य हैं, तो क्या वंशपरम्परा के नियम में कोई

सच्चाई है ? बच्चे अपने पिता माताओं के विशेष रोगों से क्लेश पाते हैं। इन बातों की संगति कैसे करें ?

उत्तर—आप जानते हैं कि कल यह कहा गया था कि हम आप ही अपने माता-पिताओं के निर्माण कर्त्ता हैं। यह एक मनुष्य है जिसके एक विशेष प्रकार का रोग है। हम मान लेते हैं कि रोग उतना ही बुरा है जितना लोग उसे कहते हैं, यद्यपि वास्तव में बुरा शब्द अनिश्चित है— क्योंकि प्रत्येक वस्तु परमेश्वर—किन्तु यह एक मनुष्य है जिसके रोग का संबंध कामुकता, पाशविक विकारों, उग्र इच्छाओं, और लालसाओं से है। अब यह मनुष्य मृत्यु के बाद एक विशेष प्रकार का क्षेत्र और गिर्दनवाह, जिससे इन इच्छाओं की पूर्ति होगी, पसन्द करेगा। दूसरे शब्दों में ये इच्छाएं अपने फलसे पहले प्रकट हो जाती हैं।

आध्यात्मिक संबंध के क़ानून से वह ऐसे लोगों के पास खिंच गया है, ऐसे लोगों से पैदा हुआ है, वह अब ऐसी देह में प्रवेश करने वाला है, जो उसकी विशेष इच्छाओं की पूर्ति के उपयुक्त होगी। इस तरह वह ऐसे लोगों के पास आता है। अब वंशपरम्परा का क़ानून (Law of Heredity सत्य रहता है, क्योंकि वह उसे एक विशेष प्रकार का शारीरिक स्वभाव देता है, जिस के द्वारा उसे अपनी कामनाओं को चरितार्थ करना होता है। इस प्रकार उदाहरण के लिये, मनुष्य कहता है, "मेरा विचार एक पुस्तक प्रकाशित करने का है।" अब, यदि मनुष्य एक पुस्तक प्रकाशित करना चाहता है, तो उसे किसी छापेखाने में जाना चाहिये, क्योंकि वहां यंत्र और सामान इत्यादि मिलेगा, छापेखाने वाले उसका काम करेंगे। वंशपरम्परा का नियम छापेखाने

के तुल्य है, उससे किसी की इच्छा के अनुकूल तैयार सामान मिल जाता है। मान लो, एक मनुष्य हत्या करना चाहता है, और भुजाली (Dagger) का बनाने वाला हत्या करने का इरादा रखने वाले को भुजाली देता है, और वह शत्रु पर आघात करता है। अब भुजाली बनाने वाले का अपराध नहीं है, किन्तु आघात करने वाला अपराधी है।

मातापिताओं ने हमें यह शरीर दिया है, क्योंकि हमने इसे चाहा था, और जो देह हमने मांगी थी वही हमें मिली, यद्यपि यह रोगग्रस्त है। अब प्रश्न यह होता है। यदि मनुष्य को अपनी इच्छाएँ पूरी करने के लिये एक शरीर पाना ही था, तो उसे रोगी शरीर नहीं मिलना चाहिये था। अच्छा, अब तुम जानते हो कि इच्छाओं का पूर्ण होना ज़रूरी है और साथ ही हमें उन्हें त्याग भी देना है; यह नियम है। मनुष्य अपने भाग्य का आप ही मालिक है। यह तुम्हारी अपनी पसन्द (रुचि) की बात है कि तुम अपनी नीची इच्छाओं को त्याग दो और ऊँची इच्छाओं को ग्रहण कर लो या न करो। ये पीड़ा और यातनाएँ तुम्हारी स्वाधीनता हरने हारी नहीं हैं, बल्कि उसे बढ़ाने वाली हैं। पीड़ा और यातना के कारण, जो चाहे जान कर हो या अनजाने, हम अधिक सावधान, अधिक खबरदार हो जाते हैं और इस तरह पर अपनी ही स्वतंत्र मर्ज़ी से हम नीची इच्छाओं को त्याग देते हैं और ऊँची इच्छाओं को ग्रहण कर लेते हैं। इस प्रकार पीड़ा और यातना हमें अपने वश में नहीं करतीं बल्कि हमें स्वाधीनता देती हैं।

यह एक मनुष्य है जिसमें नीची इच्छाओं की प्रबलता है। इन कायिक इच्छाओं को पूरा होना है। और साथ

ही उन्हें अवश्य त्याग भी देना है। यह नियम है। चूंकि तुम्हारे इस प्रभुत्व (अधिकार) ने इच्छाओं की पूर्ति की कामना की थी, इस लिये उनकी तृप्ति होनी ही ज़रूरी है, और साथ ही इन इच्छाओं की तृप्ति के दौर में दर्द, रंज और यातना का आगमन होता है। यह व्यथा और यातना तुम्हारी वह दुर्बलता दूर कर देंगी। अपने अड़ोस-पड़ोस से-उसकी घृणा का, जिस अड़ोस पड़ोस को साथ ही वह सहने को लाचार है-यह नतीजा है।

प्रश्नः—नीची इच्छाओं और सामान्यतः वंशपरम्परा-गत माने जाने वाले रोगोंके संबंध की व्याख्या तो मैं समझा, किन्तु उदाहरणार्थ यक्ष्मा कहलाने वाले रोग को ले लीजिये। यदि यह रोग हमारी तृष्णा का फल नहीं है तो मेरी समझ में नहीं आता कि इच्छा कहां होती है।

उत्तरः—साधारणतः ऊँच और नीच, पाप और पुण्य शब्दों से सारे मामले की व्याख्या नहीं होजाती। साधारणतः लोग जिन्हें अच्छा या बुरा समझते हैं, वे वेदान्त के अनुसार वैसे नहीं हैं।

वेदान्त के अनुसार अधिक भोजन या उस प्रकार का भोजन जिससे अजीर्ण या सुस्ती होती है, सब पापों की जड़ है। अधिकांश पापों का कारण एक तनिक सी त्रुटि होती है, किन्तु अजीर्ण के द्वारा तुम्हारा मिज़ाज बेकाबू होजाता है और सब प्रकार के पाप करने की पात्रता आ जाती है। वेदान्त के अनुसार, जो कोई भी बात तुम्हारे परम आनन्द या दिव्य हर्ष को रोकती या पिछाड़ती है, वही पाप है। इस प्रकार तुम्हारे अधिकांश पापों का मूल विशेषतः तुम्हारा भोजन है। दूसरे धर्म-प्रचारक इस बात

पर उतना ज़ोर नहीं देते जितना कि "राम" देता है। किन्तु है यह तथ्य। "राम" केवल अपने ही अनुभव से नहीं, किन्तु प्रिय मित्रों के अनुभव से भी कह सकता है कि यदि हमारा पेट (आमाशय) चैन से होता है या हमारा स्वास्थ्य ठीक होता है तो हम अपने मिज़ाज को क़ाबू में रख सकते हैं, अपने विकारों को वश में कर सकते हैं. अपनी इच्छाओं को रोक सकते और चेरी बना सकते हैं।

आज यह एक आदर्श स्वरूप धर्मात्मा पुरुष है, जो हज़ारों प्रलोभनों को जीत चुका है, अपने विकारों को काबू में ला चुका है। इस आदमी को ले लो जो आज ऐसे निर्मल चरित्र का है और जिस के वर्तमान चरित्र के विचार से लोग मानों ऐसा कह सकते हैं, "अरे! वह तो एक ईसा है।" किन्तु कल्ह उसकी ओर देखना, यही मनुष्य खराब से खराब प्रकारों के विकारों के आधीन हो सकता है।

लोग उछल कर परिणामों पर पहुँचना चाहते हैं। वे एक मनुष्य क माथे पर लिखना चाहते हैं "महात्मा" और दूसरे के माथे पर "पापी"। किन्तु वास्तव में कल्ह जो महात्मा था वह दूसरे दिन पापी वन सकता है, और जो पीपा था वह महात्मा हो सकता है।

चार्ल्स डिकेन्स के "दो नगरों की कहानी (A Tale of Two Cities–ए टेल आफ टू सिटीज़)" नामक उपन्यास में सिडनी कार्लटन (Sidney Carlton) का चरित्र अत्यन्त खराब अंकित किया गया है, किन्तु उस की मृत्यु इतनी शूरता पूर्ण, इतनी उत्कृष्ट है कि उस की सम्पूर्ण पाप और दोष पूर्ण प्रकृति समस्त धुल जाती है। रूसी काउंट

टौलसटाय (Russian Count Tolstoi) ने एक उपन्यास लिखा है जिस में एक महिला के चरित्र का चित्रण किया है। बराबर वह अत्यन्त कुत्सित प्रकार की विषयभोग-परायण नारी बताई गई है, किन्तु उस का अन्त इतना मर्म-स्पर्शी है कि हमारी सम्मति बदल जाती है।

लार्ड बायरन (Lord Byron) इंग्लैंड में दुरदुराया जाता था और सड़कों पर भी नहीं निकलने पाता था। लोगों को उस की सूरत से घृणा थी, किन्तु उस के जीवन के अन्तिम दृश्य इतने श्रेष्ठ और साहसिक थे कि अंग्रेज़ लोग उसे प्यार करने लगे। किन्तु सदा ही हमारे जीवन का अन्त श्रेष्ठ नहीं हुआ करता।

जब लार्ड बेकन (Lord Bacon) ने हाउस आफ लार्ड्स में पहला व्याख्यान दिया, तब लोक चकित हो गये, और समाचार पत्रों ने लिखा, "एक दिन प्रातःकाल जागने पर उस ने अपने को एकाएक प्रसिद्ध पाया।" वही लार्ड बेकन लोगों की नज़रों में गर्हित (obnoxious) होने को जीता रहा।

सर वालटर स्काट (Sir Walter Scott) अपने जीवन के पहले भाग में लार्ड बायरन जैसे उत्तम कवि नहीं समझे जाते थे। राज कवि (Poet Laureate) की हैसियत से वे अपना सिक्का नहीं जमा सके, किन्तु उन के जीवन के अन्त के समय उन की रचना इतनी सुन्दर थी कि वे उपन्यासकारों के सिरताज कहे गये।

अतएव "राम" तुम से कहता है, "कि जिनके संसर्ग में तुम आओ उन की सदा आध्यात्मिक शक्तियों में, उन की अनन्त योग्यता में, विश्वास करो। अन्तिम निर्णय करना छोड़ दो,

कभी कोई विशेष सम्मति न क़ायम करो और न दोषी ठहराओ "।

तुम्हारे सामने यह एक पापी आता है। अपने चित्त में किसी प्रकार का द्वेष, घृणा या शत्रुता उस के प्रति न रक्खो। उसे एक आध्यात्मिक शक्तिशाली समझते हुए उस के पास पहुँचो। यह मत भूलो कि आज का वही महापातकी कल परम साधु और महाशूर बन सकता है। चरित्र सांचेमें ढला हुआ नहीं है। केवल आत्मा की अनन्त सम्भावनाओं (शक्तियों) और योग्यताओं (सामर्थ्य) में विश्वास करो।

जो कोई तुम्हारे पास आवे, उसे परमेश्वरवत् ग्रहण करो, और साथ ही अपने को भी तुच्छ न समझो। आज तुम यदि कारागार में हो तो कल्ह तुम गौरवशाली भी हो सकते हो।

पुरानी इंजील (Old Testament) में, जिस सैमसन (Samson) की चर्चा है, जो अपने राष्ट्र की ज़िल्लत का कारण हुआ, वह अपने अतीत (गत आचरण) का निराकरण कर सका, गत अपमान को हर क्षण में धो सका। वेदान्त आप से सच्ची आध्यात्मिकता में, "सच्ची परमेश्वरता में," 'अन्तर्गत नारायण" में विश्वास करने को कहता है। उस में विश्वास करो, और बाहरी निर्णयों को कभी न मानो। वे कुछ भी नहीं हैं, क्योंकि हम उन को मेट सकते हैं। हम उन से ऊपर उठ सकते हैं।

यह आध्यात्मिकता जो कुछ है वही सब वस्तुएँ हैं, और यह आध्यात्मिकता सर्वत्र आ सकती है।

धर्म संसार के सदाचार को ग़लत समझते हैं। वे सम्पूर्ण असत् (पाप) के मूल में प्रहार नहीं करते। जिस मनुष्य ने आज सारे प्रलोभन का प्रतिरोध किया है, वह कल्ह

घातक, जाति-च्युत हो सकता है। कर्म और देह दोनों की दृष्टि से इस की व्याख्या होती है।

स्थूल लोक में (भौतिक दृष्टि से) हमारे चरित्र में इस प्रभेद की व्याख्या यह है कि जब तुम्हारा शरीर सुस्वस्थ है, जब तुम्हारा पेट स्वस्थ है, तब तुम्हारा चरित्र बहुत ठीक है और तुम प्रलोभन का सामाना कर सकते हो। कल्ह तुम को कोई रोग, कोई व्याधि घेर सकती है, तुम्हारा पेट दुरुस्त नहीं है, और ऐसी हालत में कोई भी बात तुम को क्षुब्ध, व्यग्र या अस्तव्यस्त कर सकती है, यह एक तथ्य है।

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि धर्म-प्रचारक इस विषय की चर्चा करना अपनी मर्यादा के विरुद्ध समझते हैं।

अपने भोजन के सम्बन्ध में सावधान रहो, तो तुम अपने रोग को अच्छा कर दोगे।

पेट को अधिक लादना, अनुचित भोजन का व्यवहार, सब पापों की जड़ है। जिस में इस प्रकार की प्रवृत्तियां हैं, वह वेदान्त की दृष्टि में उतना ही बड़ा पातकी है जितना कि अन्य सातों पापोंमें से एक या सातों का करने वाला। पेट का प्यार हमें ठीक उन देहों,उन माता पिताओं के पास पहुँचाता है कि जिन की चर्चा पहिले की जा चुकी है,और कष्ट भोग द्वारा हम दिव्य सत्य को पहुँचते हैं।

प्रश्न—इस की व्याख्या कैसे होती है, कि मान लीजिये, ६ बच्चों के कुटुम्ब में एक बच्चा साधु, एक पापी, एक स्वस्थ या बीमार इत्यादि पैदा होता हैं? यह क्या बात है कि वे सब विभिन्न हैं?

उत्तर—इस तरह पर व्यक्तिगत जन्मों में अन्तर होता है। एक बात सदा सब में सामान्य होती है। एक मनुष्य एक छापेखाने में काम कर रहा है, दूसरा रोगन करने के कारखाने का काम करता है, तीसरा एक तेल की कोठी में, चौथा कपड़े के पुतलीघर में, इत्यादि। ये सब लोग विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए हैं, किन्तु उन सब में एक बात सामान्य है। वे सब एक ही दुकान से कपड़ा ख़रीदते हैं। इसी तरह यदि एक बात में हम में प्रभेद है, तो यह लाज़िमी नहीं है कि हम में कोई भी सामान्य बातें न हों।

इन सब बच्चों में एक अभिलाषा सामान्य है, अपने माता पिता से अनुराग। यह बात उन सब में समान है। उन सब को उस घर से या उस अड़ोस-पड़ोस से स्नेह था, किन्तु उनकी दूसरी इच्छाएँ जुदी जुदी थीं। इस तरह ऐसा है कि इस संसार में कोई एक सड़क से आता है और दूसरा दूसरी सड़क से आता है, किन्तु सब एक उसी चौराहे पर मिल जाते हैं।

प्रश्न—क्या हम यह शरीर त्याग देने पर प्रेत-संसार में अपने आप को पूर्ण करते हैं?

उत्तरः—वेदान्त के अनुसार हम अपने को भावी जन्मों में पूर्ण करते हैं। ये भावी जन्म हैं, भावी जीवन हैं, जिन में हम अपने को पूर्ण करते हैं। प्रेत लोक हमारे लिये हर २४ घंटों में स्वप्न के तुल्य होंगे।

प्रश्नः—क्या हम उन की सहायता कर सकते हैं जिन की जीव-आत्माएँ जा चुकी हैं?

उत्तर:—हां, तुम कर सकते हो। उन के चित्र या उन की मूर्तियां अपने सामने रक्खो और तब सोचो, अनुभव करो तथा भान (महसूस) करो कि वे परमेश्वर हैं। इस तरह पर तुम उन की सहायता कर सकते हो। उन के लिये अच्छे विचार करो, उन के लिये अत्युत्तम भावनाएँ रक्खो, और तुम उन की सहायता कर सकते हो, तथा (इसी रीति से) अपने आप की भी सहायता करोगे।

प्रश्न:—क्या वे कभी स्थूल मामलों में हमारी सहायता करते हैं?

उत्तर:—यदि स्थूल लोक में दूसरे लोग तुम्हें सहायता दे सकते हैं, तो हम कह सकते हैं कि मृतक भी तुम्हारी सहायता करते हैं। किन्तु वेदान्त के अनुसार स्थूल लोक में भी तुम्हीं स्वयं अपने आप के सहायक हो, मृतकों की चर्चा ही क्या। तुम्हीं अपने आप की सहायता करते हो, मृतक की हैसियत से या जीवितों के शरीरों में होकर। इस प्रकार वेदान्त आप से चाहता है कि बाहर से कुछ न ढूँढ़ो, अपना केन्द्र अपने अन्दर रक्खो, और हरेक वस्तु को अन्दर ही ढूँढ़ो और वहीं से आशा करो। यदि तुम में पात्रता है तो तुम्हें अभिलाषा करने की कोई ज़रूरत नहीं, इच्छित वस्तुएँ तुम्हारे पास लाई जांयगी, तुम्हारे पास आवेंगी। यदि तुम अपने को योग्य बना लो तो, सहायता अवश्य तुम्हें आ मिलेगी। अब हम किसी अन्य दिन में किये गये सवाल पर आते हैं।

यदि मनुष्य ऐसे आस-पास (अड़ोस-पड़ोस) में रहता है कि जो हर घड़ी उस में भारत का प्रेम पैदा कर रहा है, जो

हर घड़ी उस में भारतीय विचारों का संचार कर रहा है, यदि वह ऐसी पुस्तकें पढ़ता है और ऐसे मनुष्यों के संसर्ग में आता है कि जो निरन्तर भारत वर्ष उस के सामने बनाये रखते हैं, तो वह मनुष्य चाहे अमेरिकन हो या अंग्रेज़, अपने विचारों के प्रतिफल स्वरूप भारत वर्ष में जन्म लेगा। इस प्रकार अपनी ही इच्छाओं से वह भारतवर्ष में पैदा होता है।

प्रश्नः—क्या मनुष्य लौट कर कुत्तों और बिल्लियों की योनियों में जाते हैं?

उत्तरः—अब बिल्लियों, कुत्तों और दूसरे पशुओं के बारे में (ऐसा है), यह उन अड़ोस पड़ोसों पर निर्भर है कि जिन में वे हैं। उन के भावी जन्म उन के वर्तमान अड़ोस-पड़ोसों पर निर्भर हैं।

भारतवर्ष में एक महात्मा के पास दो मनुष्य आये, उन में से एक का कुत्ते का मिज़ाज था, और दूसरे का बिल्ली का मिज़ाज था। अथवा आप यों कह सकते हैं कि एक बिल्ली और एक कुत्ता महात्मा के पास आये। कुत्ते ने महात्मा से यह प्रश्न किया, "महाराज! यह बिल्ली या बिल्ली-तुल्य मनुष्य है। वह बड़ा दुष्ट और धूर्त है, वह बड़ा बद है। अपने दूसरे जन्म में उस की क्या गति होगी?" तदुपरान्त बिल्ली-तुल्य मनुष्य महात्मा के पास गया और वही प्रश्न किया, "महाराज! यह कुत्ता या स्वानशील मनुष्य है। वह बड़ा खराब है. वह घुड़कता है, भूँकता है। मृत्यु के बाद दूसरे जन्म में उस का क्या होगा?" महात्मा चुप रहे। किन्तु बार बार ये प्रश्न किये जाने पर वे बोले, "भाइयों! तुम ने ये सवाल न किये होते तो अच्छा होता।"

किन्तु उन्हों ने उत्तर पर आग्रह किया । महात्मा ने कहा, "अच्छा, यहां यह बिल्ली है, हे कुत्ते ! यह बिल्ली तुम्हारा साथ रखती है और वह तुम्हारी आदतें सिख रही है, तुम्हारे साथ रहती है, और हर समय तुम्हारे चलन में शामिल होती है । अच्छा, अपने दूसरे जन्ममें यह बिल्ली कुत्ता होगी । वह और कुछ कैसे हो सकती है ?" और कुत्ते के सम्बन्ध में यह कि ऐ बिल्ली ! अच्छा, वह कुत्ता तुम्हारे साथ रहता है और हर घड़ी तुम्हारे लक्षण ग्रहण कर रहा है, आदतों में भाग ले रहा है । अपने दूसरे जन्म में वह अवश्य बिल्ली होगा ।" अब यह उस पर निर्भर है कि जो कुत्ते या बिल्ली का साथ रखता है । इस प्रश्न पर ब्योरेमें जाने की हमें कोई ज़रूरत नहीं है ।

प्रश्नः—मृत्यु के बाद मनुष्य का पुनर्जन्म होने में कितने दिन लगते हैं ?

उत्तरः—एक मनुष्य आज सब तरह के काम कर रहा है । वह सो जाता है, और दूसरे दिन सवेरे फिर जागता है । उसका सोने का समय मृत्यु के तुल्य है, और उसका फिर जाग पड़ने का समय पुनर्जन्म के समान है । उसके सो रहने के क्षण और फिर जागने के क्षण के बीच में जो समय बीतता है, वह उस समय के समान है जो तुम स्वर्ग, नरक, प्रेतों के राज्यों इत्यादि में बिताते हो । अब हम देखते हैं कि इस दुनिया में कुछ लोग ऐसे हैं जो केवल चार या पाँच घंटे सोते हैं, कुछ लोग दस घंटे सोते हैं, और कुछ आठ घंटे सोते हैं । बच्चे देर तक सोते हैं । बूढ़े आदमी अधिक नहीं सोते हैं । जवान आदमियों को अधिक सोने की ज़रूरत होती है । इतना भाँति २ के मनुष्यों पर,

उनकी आध्यात्मिक उन्नति की अवस्थाओं पर निर्भर करता है। जिस प्रकार इस दुनिया में तुम्हारी ज़िन्दगी का कोई नियत समय नहीं है, कुछ लोग जवान मर जाते हैं, कुछ तीस साल जीते हैं, कुछ लोग सत्तर वर्ष जीते हैं, इसी तरह पुनर्जन्म के लिये कोई नियत समय नहीं है।

प्रश्नः—क्या कोई मनुष्य इस ज़माने में वेदान्त का अनुभव कर सकता है? बीसवीं सदी की सभ्यता में रहता हुआ क्या कोई मनुष्य वेदान्त का अनुभव कर सकता है? और यह सूचित किया गया था कि वेदान्त के अनुभव के लिये मनुष्य को इस या उस तरहकी ज़िन्दगी बसर करना चाहिये। उसे हिमालय के बन में चले जाना चाहिये।

उत्तरः—"राम" कहता है, 'नहीं, नहीं, बन में तुम्हारे जाने की कोई ज़रूरत नहीं है।' लोग कहते हैं, हमें समय नहीं है। हमारा समय नित्य के कामों में बीत जाता है, हमें सब तरह के कामों को देखना पड़ता है, हमारे संबंधी और मित्र हमारा समय ले लेते हैं। एक प्रार्थना है, "ऐ परमेश्वर! मुझे मेरे शत्रुओं से बचा," किन्तु आज कलह के मनुष्य के लिये यह प्रार्थना करना अधिक मुनासिब है, "ऐ परमेश्वर! मुझे मेरे मित्रों से बचा।" मित्र हमारा सब समय लूट लेते हैं, तब चिन्ताओं का आगमन होता है।

एक बात उपसंहार में। आप जानते हैं, पढ़ना या अध्ययन करना विभिन्न प्रकारों का है। कुछ लोग तोते के समान केवल जुबान से पढ़ते हैं, कुछ लोग हाथों द्वारा विद्याभ्यास करते हैं,जैसे नौकाकार या कारीगर। "राम" के कहने का यह अभिप्राय नहीं है कि सब कारीगर वैज्ञानिक नहीं हैं, किन्तु ऐसे कारीगर भी हमने देखे हैं जो वैज्ञानिक

नहीं हैं। ऐसे लोग हैं जो एक खाड़ी तैर जा सकते हैं किन्तु जलविज्ञान के संबंध में कुछ भी नहीं जानते। ऐसे लोग हैं जो हवा में नौका खे सकते हैं, किन्तु वायुविज्ञान का तनिक भी ज्ञान नहीं रखते। ओषधियों के बनानेवाले प्रायः रसायनविद्या से बिलकुल अनभिज्ञ होते हैं। जो लोग अपने हाथों से विद्याभ्यास करते हैं उनका स्वागत है। कुछ लोग ऐसे हैं जो केवल हृदय से अध्ययन करते हैं। वे लोग दुनिया में धन्य हैं। जो लोग एक झलक में एक वस्तु का ज्ञान और अनुभव कर लेते हैं, जो लोग (Clairvoyant) दिव्यदर्शी हैं, हरेक वस्तु देखते हैं, उनका भी स्वागत है। किन्तु यदि वे केवल अपने चित्तों से अध्ययन करते हैं, तो उनकी शिक्षा से कोई लाभ नहीं है। उनमें उत्कट इच्छा होना चाहिये, और साथ ही साथ खूब अभ्यास होना चाहिये ताकि उनकी विद्या, उनकी शिक्षा दूसरों को प्रदान की जा सके। यदि वे केवल हृदय का अनुसरण करते हैं, तो वे एक अंग हैं। इस संसार में सब से अधिक काम के वे लोग हैं जो तीन पहलुओं से काम करते हैं, जिनके दिल, दिमाग, हाथ और जुबान खूब रवां हैं। वे अधिक शिक्षित हैं, वास्तव में व्युत्पन्न हैं।

इसी तरह राम चाहता है कि आप इन सब मार्गों से दिल, दिमाग, हाथ और ज़बान, अन्तःकरण, हरेक वस्तु से, वेदांत का अध्ययन करें और सीखें। उसे आप अपने शोणित (blood) के द्वारा झनझनाने दो, अपनी धमनियों और नसों में उसे घूमने दो, अपने हृदय में उसे धसने और व्यापने दो, अपना दिमाग उसमें डूबने दो, अपनी सारी हस्ती उसमें भीजने दो। तब आप अपने को उन्नत करोगे, तब आप हर प्रकार

से स्वतंत्र होंगे। तब आप अपनी परम ईश्वरता, अपनी सच्ची प्रकृति का अनुभव करोगे। तब आप प्रत्येक स्थिति बिन्दु से पूर्णतया स्वतंत्र होंगे।

'राम' आप से कहता है कि यदि आप इस या उस शरीर में दूसरा भेद पावें, यदि आप को समझ पड़े कि (अमुक) मनुष्य जो कुछ उपदेश देता है वह सचमुच उसके हृदय में नहीं है, तो आप उसे कुछ न गिनें। आप स्वयं विषय को अपनावें, दिल, दिमाग और अन्तःकरण से (उसके) सत्य का पालन करें, आचरण में उसका पालन करें; आप उच्च, श्रेष्ठ और महान हो जाँयगे। 'राम' की आकंक्षा है कि आप वह हो जाँय और वह बन जाँय।

यदि 'राम' में हज़ारों दोष हैं, यदि वह हज़ारों भूलें या गलतियां करता है, तो आप से क्या प्रयोजन? 'राम' उन भूलों का ज़िम्मेदार है। 'राम' तुम्हें श्रेष्ठ सत्य (तत्तु वंहतु) देता है। इसे अपना जीवन बना लो, और यह तुम्हें सुख देगा, यह तुम्हें सब संशयों से परे कर देगा।

मान लो कि 'राम' जो कुछ उपदेश देता है उस के अनुसार बर्ताव नहीं करता है। हो सकता है कि राम ऐसी परिस्थिति और अड़ोस पड़ोस में रहता है जो उस के ऐसा आचरण करने में बाधक हैं। किन्तु तुम इस (वेदान्त) के अनुसार रह सकते हो, इस का प्रयोग कर सकते हो।

इसी तरह ये कालविन (Calvins), ये एडीसन (Edisons) और अन्य सब महापुरुष केवल अपने दिमागों से काम की बन्दिश बांधते हैं। ये नमूने, ये नक्शे हाथ से नहीं बनाये जा सकते। उन के लिये एक प्रकार की यंत्रावली की ज़रूरत है। इस लिये वे आप को केवल नक्शे या

मनसूबे देते हैं। तुम्हारे हाथ हैं, और तुम यंत्रावली बना सकते हो। तुम में ये नकशे बनाने अथवा ये बन्दिशें बांधने की योग्यता या शक्ति न हो, किन्तु उन्हें लेने को और उन्हें अमल में लाने को तुम्हारे हाथ हैं।

श्रमजीवियों (मज़दूरों) के कष्ट का यह कारण है। जो नकशे उन्हें दिये जाते हैं, उन को ग्रहण करके वे अमल में नहीं लाते हैं।

"इसी तरह उन लोगों की दलील झूठी है जो कहते हैं, हम इस शिक्षक से कुछ न ग्रहण करेंगे, क्योंकि वह जो कुछ उपदेश देता है तदनुसार आचरण नहीं करता है।"

पुनः, एक मनुष्य बलकारक पाक, दूध या मिठाइयां बेचता है। चूंकि वह उन पाकों को नहीं खाता है, दूध नहीं पीता है, मिठाई नहीं खाता है, इस लिये क्या आप उस से खरीदेंगे नहीं ?

यदि किसी चिकित्सक के बीमार होने के कारण तुम उस की बनाई दवाई नहीं ग्रहण करते तो, वेदान्त कहता है, आप गलती पर हैं, चाहे वह अपने रोग की दवा न बता सकता हो। चिकित्सक किसी रोग से बीमार है। जिस रोग से आप बीमार हैं उस की चिकित्सा वह जानता है, किन्तु जिस रोगसे वह स्वयं बीमार है उस की दवा वह नहीं जानता है। हो सकता है कि वह अपने को नहीं चंगा कर सकता है, किन्तु साथ ही वह आप को निरोग कर सकता है।

इस तरह 'राम' कहता है कि भारत और अमेरिका में बहुतेर लोगों से वार्तालाप करने में उसे पता लगा है कि लोग पहले जब तक ग्रंथाकार का नाम नहीं जान लेते, तब

तक पुस्तकें नहीं पढ़ते। बहुतेरे कहते हैं, "यह एक ग्रंथकार है, उस ने यह और वह जघन्य कृत्य किया है, और वह अपने को परमेश्वर कहता है। मैं उस की पुस्तक नहीं पढ़ना चाहता।" 'राम' कहता है, भाई! भाई! गलती न करो। मनुष्य चाहे खराब हो, परन्तु जो सत्य वह तुम्हें देता है उस का विवेचन करो, सत्य को उसी के गुण-दोषों से परखो।"

भारत वर्ष में रहट के द्वारा कूपों से पानी भरा जाता है। कूँओं से पानी निकल कर विशेष तरह के बने हुए हौदों में गिरता है, और छोटी नालियों के ज़रिये से पानी इस हौद से खेतों में पहुँचाया जाता है। जब जल कूप में है तब उस के किनारे न चरागाह है, न हरेरी है, और न पेड़ हैं। जब जल हौदे में है तब वहां भी कोई घास फूस नहीं है, किन्तु जब खेतों में जल पहुँचता है, तब भूमि उर्वरा (Fertile) और सम्पन्न हो जाती है, और हरेरी प्रकट होती है। इस प्रकार हमें यह तर्क नहीं करना चाहिये कि जल खेतों में हरेरी नहीं पैदा कर सकता, क्योंकि जब पानी कूँए या हौद में था तब वहां कोई हरेरी नहीं थी।

इसी तरह राम आप से कहता है कि जब ज्ञान आप के पास आता है तो उसे ग्रहण कीजिये, कहीं से भी वह आता हो। यह न कहो, "यदि ज्ञान भारत से आता है तो भारतवासी स्वयं प्रकृति के पलड़े में इतने नीचे क्यों हैं?" सत्य को उसी के गुण दोषों से परखो। मनुष्यों को सुखी करने का यही एक मात्र उपाय है; सच्चे कल्याण का, परमेश्वर का केवल यही मार्ग है। यह आप को सब चिन्ताओं से छुटा देता है, यह आप को सब मुसीबत से ऊपर उठा

देता है। यही एक मात्र मार्ग है, दूसरा कोई नहीं।

इसी तरह 'राम' आप से कहता है कि यदि ईसा का चरित्र इतना श्रेष्ठ था तो यह नतीजा न निकालो कि ईसा के उपदेश सम्पूर्ण सत्य हैं और सत्य से इत्तर नहीं हैं। कभी कभी हम अति सुन्दर युवकों को अति घृणित कार्य करते देखते हैं। एक मनुष्य के कर्म चाहे श्रेष्ठ हों, उस के उपदेश और लेख भी चाहे वैसे ही हों, किन्तु साथ ही साथ जो कुछ उस से निकलता है वह सब उत्तम नहीं है। उस का रक्त या उस की हड्डियां नहीं अच्छी हैं।

इसी तरह इंजील पढ़ने में उसमें जो कुछ है वह सब ईसा के उपदेशों में न लगाओ। हज़रत ईसा पूर्ण हैं, उनके उपदेश पूर्ण हैं। किन्तु जो दूसरे का है वह उस एक के माथे न मढ़ो। पुस्तक को उसकी योग्यता से परखो। सर आइज़ाक निउटन (Sir Isaac Newton) की रचना प्रिंसिपिया (Principia) में अनेक भूल हैं। वह अपने समयमें चाहे सर्व श्रेष्ठ मनुष्य रहा हो, तथापि उसकी पुस्तकों का विवेचन उनके गुण दोषों से करो।

इसी तरह 'राम' कहता है कि आपको 'राम' की भलाइयों और बुराइयों से कोई मतलब नहीं है। आध्यात्मिक उपदेश को उसी (उपदेश) की भलाई बुराई से परखो। वेदान्त के उपदेश आपको उठाते और उन्नत करते हैं। 'राम' यह नहीं चाहता कि आप उपदेश को यह समझ कर ग्रहण करें कि 'राम' देता है, वह उपदेश तुम्हारे लिये है, वह तुम्हारा है।

वेदान्त का अर्थ किसी की गुलामी नहीं है। बौद्ध धर्म बुद्ध की गुलामी है, इसलाम मोहम्मद की गुलामी है, पारसी धर्म ज़ोरोआस्टर की गुलामी है, किन्तु वेदान्त किसी

महात्मा की गुलामी नहीं है। वह सत्य है, ऐसा सत्य जो हरेक व्यक्ति का है।

यदि हम घाममें बैठें, तो हम उसके कृतज्ञ नहीं होते, क्योंकि सूर्य प्रत्येक मनुष्य का है। यदि 'राम' वेदान्त के घाम में बैठता है, तो तुम भी उस घाम में बैठ सकते हो, वह आप का भी उतना ही है जितना कि 'राम' का है। सत्य आपका भी ठीक उतना ही है जितना भारत वर्ष का है। इसे इसकी योग्यता के हिसाब से स्वीकार और, ग्रहण करो। यदि यह अच्छा है तो रक्खो। यदि यह खराब है तो बाहर ठोकरा दो। जिस तरह पर इसलाम और ईसाइत भारत में तलवार और रुपये से लाये गये हैं, उस तरह पर हम वेदान्त नहीं लाते हैं। राम उस तरह से इसे नहीं लाता है। वेदान्त आप का है, इसे लो और अभ्यास करो।

यदि एक मित्र घाम में बैठता है और उसका उपयोग नहीं करता, तो यह कोई कारण नहीं है कि तुम भी घाम का उपयोग न करो। ठीक ऐसा ही वेदान्त के बारे में है। इसे इस की योग्यताओं से परखो। इसे सीखो। अपने चरित्र में इसे उतारो। सम्पूर्ण व्यक्तित्व से ऊपर उठे रहो। सब ईसाओं, बुद्धों, मोहम्मदों या रामों से ऊपर खड़े हो। राम कहता है, "इस शरीर को अपने पैरों से कुचल डालो।" 'यह शरीर मैं नहीं हूँ,' यह अनुभव करो, ऐसा जानो। जानो कि 'मैं वास्तविक तत्व हूँ,' ऐसा मुझे जानो और स्वाधीन होवो, यह अनुभव करो, ॐ उच्चारण करो "मैं हूँ"—ॐ, जिहोवा, ईसाओं का ईसा। मुझे जानो और मैं तुम हूँ। इसका अनुभव करो, और तुम सब चिन्ताओं से परे हो जाते हो। यह सब लड़खड़ाहट और जल्दी छोड़ दो, और तब सब

ईसाओं, सब मोहम्मदों, सब मित्रों और अन्य सब से, जो इनको नियत पथदर्शक मानते हैं, ऊपर उठो।

वे परिवर्तनशील हैं। सब चंचल हैं। परम तत्व, अर्थात् इन सब छायाओं के कारण और मूल स्वरूप परम तत्व को जानो। उसे जानो और स्वाधीन हो जाओ।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

पुनर्जन्म और पारिवारिक बन्धन।

१७ दिसम्बर १९०२ को एकेडेमी आफ साइंसेज में दिया गया (व्याख्यान)।

महिलाओं और भद्रपुरुषों के रूप में स्वयं मैं—

भारतवर्ष में एक बड़ा धनी व्यापारी एक बार अपने नगर के निवासियों को एक बड़ा भोज देने वाला था। प्रायः बड़े भोजों में रंडियों का एक गोल नाचने गाने के लिये बुलाया जाता है। यह चाल अब भारतवर्ष में छोड़ी जारही है। किन्तु राम जिस समय की चर्चा कर रहा है तब इसका बड़ा रिवाज था।

एक रंडी ने नाचना गाना शुरू किया। उसने बहुत ही फूहर (अश्लील) गीत गाया। किसी को भी रुचने के लायक़ नहीं था। तथापि उस विशेष अवसर पर गीत सारी महफिल के दिल में गड़ गया। किस कारण से? आप जानते हैं कि भारतवर्ष में शिक्षित पुरुष और सज्जन युवक ऐसे खराब और भद्दे गीतों को कभी नहीं पसन्द करते हैं, किन्तु उस अवसर पर गीत ने महफिल में मौजूद लोगों के दिलों में ऐसा घर किया कि वे मोहित हो गये। उस अवसर के महीनों बाद, अधिकांश पंडित जन, जिन्हों ने वह गीत सुना था, एक बार सड़क पर जाते हुए धीरे धीरे वह गीत गुन-गुनाते हुए देखे गये। और वे सब के सब, जिन्हों ने एक बार सुना था, उस गीत को पसन्द करते और ध्यान में रखते थे।

प्रश्न यह है कि मोहने वाली कौन सी वस्तु थी? जिन लोगों ने गीत सुना था उन में से किसी से भी पूछो कि वह

कौन सी बात है जिस के कारण गीत तुम को इतना प्यारा हो गया है ? वे सबके सब कहेंगे कि गीत बड़ा सुन्दर है, बड़ा सरल है, बहुत ही श्रेष्ठ बनाने वाला है, अति उन्नायक है। किन्तु वह (वास्तव में) ऐसा नहीं है। यही गीत इस रंडी से सुनने के पहले उनके लिये अत्यन्त घृणित था, किन्तु अब वे इसे पसन्द करते हैं। यह एक भूल है। असली जादू गाने के तर्ज़ और स्वर में, चेहरे में, चितवन में, वेश्या की सूरत में था। असली आकर्षण औरत में था, और वह असली मोहनी गीत में बदल दी गई थी।

यही दुनिया में होता है। एक शिक्षक आता है जिसका मुख बड़ा सुन्दर है और नेत्र बड़े रसीले हैं। उसका स्वर अति स्पष्ट है और वह अपने को इधर और उधर झोल दे सकता है। वह जो कुछ कहता है सो सुन्दर और चिताकर्षक है। उसका कथन मनोहर है। दुनिया यह गलती करती है। कोई केवल सत्य की जाँच नहीं करता। गीत के सम्बन्ध में कोई कुछ भी नहीं सोचता। मजलिस या जमाव के लिये बातों को उपस्थित करने के तरीके, या अभिनय करने वा बोलने का ढँग, वर्णनप्रणाली, बाहरी चीज़ों की मनोहरता, ये सब शिक्षा वा उपदेश को अधिक चित्ताकर्षक बनाते हैं।

उस दिन एक बड़े सज्जन मित्र, एक बड़े आदरणीय श्रोता एक स्वामी अर्थात् स्वामी विवेकानन्द के सम्बन्ध में 'राम' से बातें कर रहे थे। प्रश्न किया गया, "क्या उन की नाक और नेत्र सुन्दर नहीं थे ?" तुम व्याख्यानों पर ध्यान देते हो या नाक आँखों को देखते हो ?

दुनिया का यही तरीका है। अधिकांश वक्ताओं के

बोलने के ढँग में, वर्णनप्रणाली में, उन की आवाज़ में चित्ताकर्षण था जादू है, और वह जादू उन की वक्तृता में आरोपित किया जाता है।

स्वयं चीज़ों या बातों को तौलो। वक्ता की देह की अपेक्षा वास्तविक वक्ता पर अधिक ध्यान दो। ये शब्द कटु और विकट मालूम पड़ते हैं, किन्तु 'राम' पुरुषों या शरीरों का आदर करने वाला नहीं है। 'राम' तुम्हारा आदर करता है, अर्थात् तुम जो सत्य हो उस का। सत्य तुम्हारा वास्तविक स्वरूप है, और इस अर्थ में 'राम' तुम्हारा आदर करता है। आप चाहे बोलने के ढँग को नापसन्द करें, आप चाहे वर्णन शैली को नापसन्द करें, 'राम' महिलाओं, सज्जनों के रूप में अपने आप से कहता है, 'राम' आप से कहता है कि यदि आप सच्चा सुख चाहते हैं, यदि आप सच्ची शान्ति चाहते हैं, तो आप को 'राम' की वक्तृताओं पर ध्यान देना चाहिये, आप को उस के ये व्याख्यान सुनना चाहिये। वे तुम्हें सुख देने वाले हैं। उन को तौलो। उन पर विचार करो, जो शब्द तुम सुनो उन का चिन्तन करो। जब आप घर जाँय, तब उन्हें याद करने और उन पर अमल करने की कोशिश कीजिये।

'राम' वेदान्तिक धर्म पर व्याख्यान देना चाहता था। किन्तु यहां तो अनेक सवाल हैं। ये प्रश्न उत्तर देने के लिये 'राम' को भेजे गये हैं। यदि 'राम' से कोई भी प्रश्न न किये जाँय, तो भी-'राम' विषय पर बोलता हुआ एक के बाद एक प्रमेय (proposition सिद्धान्त) पर विचार करेगा। सब प्रश्नों का उत्तर यथा समय दिया जायगा, किन्तु कुछ (लोग) अपने प्रश्नों का उत्तर पहले चाहते हैं। आज हम

इन सब प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकते। एक दिन में एक प्रश्न हम ले सकते हैं, और वही प्रश्न उस दिन के प्रवचन या व्याख्यान के विषय का भी काम दे सकता है। यह प्रश्न पहला था, अतः हम इसे उठाते हैं।

इसे प्रारम्भ करने से पूर्व इंजील, कुरान, वेदों, और गीता के सम्बन्ध में कुछ शब्द कहे जा सकते हैं। लोग इन पुस्तकों को लेते हैं और इन पर आँख मूँद कर विश्वास करते हैं, क्योंकि वे ऐसे मनुष्य की कलम से निकली हुई हैं, जिन्हें वे पसन्द करते हैं। हज़रत ईसा का चरित्र उत्कृष्ट था, प्रभाव सुन्दर था। और जो वृत्त ईसा के इतिहास (गास्पेल-Gospel) में दिये हुए हैं, वे उन (ईसा) के मुख से निकले हुए बताये जाते हैं, इस लिये हमें उन्हें ज़रूर मानना ही उचित है। कृष्ण महाराज बड़े अच्छे थे और उन का चरित्र उत्कृष्ट था, और चूंकि गीता उन के मुख से निकली है, अतएव समग्र और पूर्ण रूप से हमें उसे ज़रूर मानना ही चाहिये। बुद्ध देव बहुत अच्छे थे, और अमुक अमुक पुस्तक उन से निकली हुई है, या कम से कम उन से निकली हुई बताई गई है, अतएव उस में पूरा विश्वास हमें अवश्य करना ही उचित है, तथा हमें अपना विचार करना अब रोक देना चाहिये। हमें चिन्तन छोड़ देना चाहिये, हमें उस सत्य को इस लिये स्वीकार कर लेना चाहिये कि वह उन (महापुरुषों) से प्राप्त होता है। क्या यह वही चूक नहीं है, क्या यह वही भूल नहीं है जो कुछ मिनट पहले उक्त वेश्या के दर्शकों और श्रोताओं ने की थीं? वही गलती है। उन का उपदेश एक चीज़ है और उन का चरित्र तथा उन के जीवन का सौंदर्य दूसरी चीज़ है। प्रायः

ऐसा होता है कि एक मनुष्य अपने समय का सर्वोत्कृष्ट मनुष्य था, किन्तु उस की शिक्षा अपूर्ण थी। दुनिया की सारी दलबन्दी या साम्प्रदायिकता का आधार यही भूल है। दुनिया के सब धार्मिक झगड़े और संग्राम इसी भूल का परिणाम हैं। आप जानते हैं कि ओलिवर गोल्डस्मिथ (Oliver Goldsmith) ऐसा मनुष्य था जिस के सम्बन्ध में डाक्टर जोह्नसन (Dr. johnson) ने कहा था कि उस का लिखना देवदूत (फरिश्तों) का सा था, और वह एक एम. डी. (डाक्टरी) की सब से बड़ी परीक्षा उत्तीर्ण भी था। यह ओलिवर गोल्डस्मिथ भोजन और बातचीत करते समय बहुत ठीक रहता था, किन्तु अपने भोजन और बातचीत के प्रकार का वर्णन करते समय वह कहा करता था कि भोजन या बातचीत करते समय मैं नीचे का जबड़ा (jaw) कभी नहीं चलाता हूँ। हमेशा ऊपर का जबड़ा चलता है, और नीचे का कदापि नहीं। इस विषय पर डाक्टर जोह्नसन से उस का बहुत शास्त्रार्थ हुआ था। वह अपने भ्रान्त कथन का बड़े आग्रह से निरूपण किया करता था। आज कल प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि जब हम बातचीत करते या खाते हैं, तब सदा नीचे का ज़बड़ा चलता है और ऊपर वाला कभी नहीं। जब हम सारा सिर घुमाते हैं तब बेशक ऊपरी चौंह (जबड़ा) चलती है। तथापि उस का पक्ष था कि नीचे की चौंह कदापि नहीं किन्तु ऊपर की चौंह चलती है।

जहां तक व्यावहारिक जीवन का सम्बन्ध है। वह बिलकुल ठीक है, किन्तु स्वयं अपना अनुभव, अपना निजी कार्य, स्वयं अपना जीवन मनुष्य नहीं बयान कर सकता।

आप जानते हैं कि (किसी काम का) करना एक बात है और हमारे काम करने की बिधि का विज्ञान जानना दूसरी बात है। हरेक व्यक्ति अंग्रेज़ी बोलता है, किन्तु अंग्रेज़ी व्याकरण थोड़े ही लोग जानते हैं। हरेक व्यक्ति किसी न किसी तरह बहस करता है किन्तु तर्कशास्त्र थोड़े ही लोग जानते हैं या थोड़े ही लोगों ने आनुमानिक या आनुषङ्गिक तर्कशास्त्र (Deductive or Inductive Logic) पढ़ा है। इसी तरह, आदर्श जीवन व्यतीत करना एक बात है और उस के तत्वज्ञान कहने की योग्यता, उस की युक्तियां देने की योग्यता, दूसरी चीज़ है। लोग यह भूल करते हैं। वे आचार्यों के शरीर या व्यक्तिगत आचरण को उन के उपदेशों में बदल देते हैं और आचार्यों के गुलाम बन जाते हैं। 'राम' कहता है, सावधान; सावधान!

हज़रत ईसा के पास बहुत थोड़ी किताबें थीं। तथापि बड़े बड़े शास्त्री और महामहोपाध्याय गोस्पल (धर्मग्रन्थ) में जो कुछ लिखा है उस व्याख्या के लिये अपने दिमाग़ को खाली किया करते हैं। हज़रत मोहम्मद ने उत्तम बातें कही हैं। उन्हें सारी प्रेरणा और सूचना कहां से मिली? उन्हें प्रत्यक्ष उस भंडार से प्राप्ति हुई जो तुम्हारे अन्दर भी है।

महर्षि मनु के पास बहुत थोड़ी पुस्तकें थीं, किन्तु उन्हों ने हिन्दुओं को क़ानून पर एक सुन्दर ग्रन्थ प्रदान किया। मिस्टर होमर के पास बहुत थोड़ी पुस्तकें थीं, तथापि उस ने जो महाकाव्य इलियड ऐंड ओडीसी (Illiad and Odyssey) आप को दिया उस का सब भाषाओं में उल्था हो रहा है। अरस्तू (Aristotle) न तो

एम. ए. था और न धर्माचार्य था, तथापि एम. ए. पास लोगों को उस की पुस्तकें पढ़ना पड़ती हैं।

क्राइस्ट और कृष्ण को ईश्वर-प्रेरणा (inspiration) कहां से मिली? अन्दर से। यदि ये लोग अन्दर से ज्ञान प्राप्त कर सके, तो क्या आप ऐसा नहीं कर सकते? अवश्य आप कर सकते हैं। वह मुख्य सोता, वह भंडार, वह चश्मा, जिस से उन्हें प्रेरणा (ईश्वर प्रबोध) मिली, तुम्हारे अन्दर भी है, ठीक वहीं है। यदि यह बात है, तो उस जल के लिये क्षुधा और पिपासा क्यों जो हज़ारहा वर्षों से इस दुनिया में पड़ा रहा है और जो अब बासी हो गया है। तुम सीधे अपने अन्दर जा सकते हो और छक के अमृत पी सकते हो। सोते तुम्हारे अन्दर हैं।

'राम' कहता है, "भाइयो और मेरे आत्म स्वरूपों! वे लोग उन दिनों में जीवित थे, तुम आज ज़िन्दा हो, हजारों साल के सुरक्षित मुर्दे न बनो। जीतों को मृतकों के हाथ में न सौंपो। देवी वंशलोचन (divine manna) कल्याणमय सुधा (blessed nectar) तुम्हारे अन्दर है। प्राचीनों की पुस्तकें जब उठाओ, तब उन्हें इस विश्वास से न उठाओ कि उन (पुस्तकों) में दिये हुए प्रत्येक शब्द के हाथ तुम्हें अपने आप को बेच देना चाहिये। अपने आप सोचो, स्वयं चिन्तन करो। जब तक तुम उन बातों का अनुभव नहीं करोगे, जब तक तुम स्वयं उन बातों को अमल में नहीं लाओगे, जब तक अपने ही जीवन से तुम उन के सत्यासत्य की जाँच नहीं करोगे, तब तक तुम क्राइस्ट का अभिप्राय नहीं समझ सकोगे, तब तक तुम नहीं जान सकोगे कि वेदों का क्या अर्थ है, या गीता का क्या

अर्थ है, अथवा ईसाई धर्मग्रंथ (गास्पेल्स) का क्या प्रयोजन है। जैसी कि कहावत प्रचलित है, कि मिल्टन को समझने के लिये एक मिल्टन ही की ज़रूरत है। क्राइस्ट को समझने के लिये तुम्हें क्राइस्ट होना पड़ेगा। कृष्ण को जानने के लिये तुम्हें भी एक कृष्ण बनना पड़ेगा और बुद्ध को समझने के लिये तुम्हें बुद्ध होना पड़ेगा। "होना" का क्या अर्थ है ? बुद्ध होने के लिये क्या तुम्हें भारतवर्ष में पैदा होना चाहिये ? नहीं, नहीं। क्राइस्ट होने के लिये क्या तुम्हें जूदिया (Judea) में पैदा होना होगा ? नहीं । मोहम्मद होने के लिये क्या तुम्हारा अरब में पैदा होना ज़रूरी है ? नहीं। बुद्ध कैसे बना जासकता है, ईसा कैसे बना जासकता है, मोहम्मद कैसे बना जासकता है ? यह छोटी कहानी इसका स्पष्टीकरण करेगी।

एक मनुष्य एक प्रेम-काव्य, एक सुन्दर काव्य, जिस में लैली और मजनू के प्रेम का उपाख्यान था, पढ़ता था। उस काव्य का नायक मजनू उसको इतना भाया कि उसने मजनू बनने का प्रयत्न किया। मजनू बनने के लिये उसने एक चित्र लिया, जिस चित्र के सम्बन्ध में किसी ने उससे कह दिया कि यह उसी काव्य की नायिका (लैली) का चित्र है, कि जो वह पढ़ता रहा है। उसने वह चित्र लिया, उसे गले से लगाया, उसके लिये आँसू गिराये, उसे अपने हृदय पर रक्खा, और कभी उसे छोड़ता नहीं था। किन्तु आप जानते हैं कि कृत्रिम प्रेम बहुत दिनों नहीं टिक सकता। यह बनावटी प्रेम है। स्वाभाविक प्रेम की नक़ल नहीं की जा सकती, और वह प्रेम का स्वांग करने की चेष्टा कर रहा था।

एक आदमी उसके पास आया और उससे पूछा, "भाई !

तुम क्या कर रहे हो ? मजनू होने का यह उपाय नहीं है। अगर तुम मजनू होना चाहते हो तो तुम्हें उसकी प्रेयसी को लेने की ज़रूरत नहीं है, तुम में मजनू का असली अन्तरिक प्रेम होना चाहिये। प्रेम के उसी पात्र (पदार्थ) की तुम्हें ज़रूरत नहीं हैं, तुम्हें आवश्यकता है उतने ही तीव्रतम प्रेम की। तुम्हारा अपना (स्वतंत्र) प्रेमपात्र हो सकता है,तुम अपनी नायिका आप चुन सकते हो, तुम आप अपनी प्यारी चुन सकते हो, किन्तु तुम में भावना और प्रेम की वही अतिशयता होनी चाहिये जो मजनू में थी। सच्चा मजनू बनने का यह उपाय है।"

इसी तरह 'राम' तुमसे कहता है, यदि तुम ईसा, बुद्ध, मोहम्मद, या कृष्ण बनना चाहते हो, तो तुम्हें उन कामों की नकल करने की आवश्यकता नहीं है जो उन्होंने किये थे; उनके आचरण के प्रकार के दास होने की तुम्हें ज़रूरत नहीं है। यह ज़रूरत नहीं है कि तुम अपनी स्वतंत्रता उनके कृत्यों और कथनों के हाथ बेच डालो, तुम्हें उनका चरित्र उपलब्ध करना होगा, तुम्हें उनकी भावनाओं की अतिशयता प्राप्त करना होगी, तुम्हें उनके अनुभव की गहराई प्राप्त करना होगी, तुम्हें उनकी गम्भीर प्रकृति, उनकी सच्ची शक्ति प्राप्त करना होगी। यदि तुम अपने जीवन में वही शील प्रकट करो, तो अब तुम्हारे सामने तुम्हारे आसपास और इर्दगिर्द जो चीज़ हैं वे ज़रूर बदल जांयगी। क्राइस्ट का यदि आज जन्म होता तो वह क्या करता ? क्या वह फिर अपने को सूली पर चढ़ाता ? नहीं। तुम ईसा बन कर भी जीते रह सकते हो। क्राइस्ट ने अपने विश्वासों के लिये अपनी देह को सूली पर लटकवाया, और शोपेनहार ने अपने विश्वासों के लिये अपनी

देह को जीता रक्खा। और कभी कभी अपने विश्वासों के लिये जीना अपने विश्वासों के लिये मर जाने से अधिक कठिन है।

सो इस प्रस्तावना का संकलन इस कथन से होता है, "हरेक वस्तु का विचार उसके गुण दोषों से करो, आचार्य के व्यक्तित्व को, आचार्य के जीवन को, उसके उपदेशों में बाधक न होने दो। उपदेश और जीवन को हमें पृथक पृथक समझना चाहिये।"

यह पहला प्रश्न है; "यदि पुनर्जन्म सत्य है तो क्या यह पारिवारिक बन्धनों का टूटना नहीं है?" और प्रश्न का दूसरा भाग यह है, "जो इस जीवन में एक साथ गुथे हुए हैं क्या वे प्रेत संसार (वा परलोक) में न मिलेंगे?"

यह एक सुन्दर प्रश्न है। हम इस के हिस्सों पर क्रम से विचार करेंगे। "यदि पुनर्जन्म सत्य है, तो क्या यह पारिवारिक बन्धनों का टूटना नहीं है?"

राम केवल इतना जानना चाहता है कि क्या इस संसार में कोई पारिवारिक बन्धन हैं? क्या आप के कोई पारिवारिक बन्धन हैं? एक मनुष्य के एक लड़का है, जो अपने बाप के साथ तभी तक रहता है जब तक नाबालिग है। बच्चा सयाना होता है, अच्छी आमदनी का पद पाता है, और अपने बाप से फट कर अलग रहना शुरू करता है। लड़का जो तनख्वाह पाता है उस से बाप क्यों लाभ उठावे? तुरन्त बन्धन चट से तोड़ दिया जाता है। लड़के का अपना निज का एक कुटुम्ब है। हो सकता है कि पुत्र भारत, जर्मनी, या किसी दूसरे देश को चला जाता है, पिता किसी दूसरे देश को लम्बा होता है। पारिवारिक बन्धन कहां है?

हां, पारिवारिक बन्धन है, किन्तु केवल नाम का। मैं जोह्न एस. (John S) हूँ, मेरा पिता जार्ज एस. (George S) था। नाम, केवल नाम। नाम में क्या है ? आओ देखें कि क्या कोई बन्धन है ?

एक मनुष्य यहां पैदा हुआ है और एक लड़की कहीं अन्यत्र पैदा हुई है। एक अमेरिकन है, दूसरा जर्मन है। उन का विवाह होता है। कन्या का पारिवारिक बन्धन किसी जगह था, लड़के का पारिवारिक बन्धन किसी दूसरी जगह था, और उन में विवाह हुआ। अरे, पुराने बन्धन कहां चले गये ? अब एक नई गाँठ लग गई, और फिर एक ऐसा समय आता है जब उन का विवाह बन्धन टूट जाता है। दोनों फिर अलग २ व्याह करते हैं। बन्धन कहां हैं ? क्या तुम उन को स्थिर, अचल रख सके ? एक लड़का और उस की बहन एक ही माता-पिता से पैदा हुए हैं, और उसी घर में अपना बचपन बिताते हैं। वे साथ बन्धे हुए हैं। उन में एक पारिवारिक ग्रन्थि है। लड़का आस्ट्रेलिया चला जाता है और अपने नाते वहां जोड़ लेता है। बहन फ्रांस चली जाती है और वह फ्रांसीसी नारी बन जाती है। बन्धन कहां हैं ? अब सवाल होता है, "यदि पुनर्जन्म सत्य है, तो क्या यह पारिवारिक बन्धनों की टूटा-फाटी नहीं है ?" पारिवारिक बन्धनों का इस संसार में अस्तित्व ही नहीं है। वह (पुनर्जन्म) तोड़ेगा क्या ? यह पारिवारिक बन्धनों का तोड़ना नहीं है, क्योंकि पारिवारिक ग्रन्थियां कहीं नहीं हैं।

किन्तु यदि हम मान लें कि वस्तुतः पारिवारिक ग्रंथियों का अस्तित्व है और हम उन्हें इस जीवन में कुछ समय

तक बनाये रख सकते हैं, तो पुनर्जन्म उन्हें मना नहीं करता है। मान लीजिये कि आप कहते हैं कि मेरे इतने बच्चे हैं। उन में से एक मर जाता है। तुम पारिवारिक बन्धनों को क़ायम रखना चाहते हो, किन्तु एक छिन जाता है। इस दुनिया में भी सम्बन्ध टूट जाता है। किन्तु कुछ लोग समझते हैं कि जो धागे टूट जाते हैं वे वैकुंठ में जुड़ जाँयगे। यदि वे किसी दूसरे लोक में जुड़ सकते हैं, और यदि आप चाहते हैं कि वे फिर बन जांय और ये बन्धन जुड़ जाना चाहिये, तो कोई जरूरत नहीं है कि एक काल्पनिक वैकुंठ के अस्तित्व को आप मान लें, जिस का उल्लेख किसी भूगोल पुस्तक में नहीं है और जिस का पता कोई पदार्थ-विज्ञान नहीं बताता। यदि आप चाहते हैं कि आप का लगाव आप के मित्रों से अधिकतर काल तक बना रहे, तो पुनर्जन्म के क़ानून के अनुसार यह मृत्यु के बाद नहीं चल सकता। उस (पुनर्जन्म के नियम) के अनुसार वह (लगाव) नहीं जारी रह सकता, क्योंकि मनुष्य अपने भाग्य का आप स्वामी है। आप अपने व्यक्तिगत बन्धन और व्यक्तिगत नाते तथा रिश्ते खुद बनाते हैं। मरते समय यदि आप का किसी पर गहरा प्रेम है तो अपने दूसरे जन्म में आप उसी व्यक्ति को किसी दूसरे शरीर में उत्पन्न हुआ और अपने से सम्बद्ध पावेंगे। यदि अपने वर्तमान जन्म में आप उस पुरुष को नहीं देखना चाहते हैं और आप उस से कोई सरोकार नहीं रखना चाहते, तो पुनर्जन्म के क़ानून के अनुसार आप के दूसरे जन्म में आप का उस का कोई वास्ता न होगा। पुनर्जन्म का क़ानून यह नहीं कहता कि मित्र और शत्रु भी, जिन लोगों के संसर्ग में आप नहीं आना चाहते, और जिन लोगों को बड़ी उत्सुकता से आप अपने

साथ रखना चाहते हैं, मृत्यु के बाद वे बलात आप के साथ कर दिये जाँयगे। वेदान्त यह नहीं कहता कि जिनकी उपस्थिति आप के लिये घृणास्पद है, जिन की मौजूदगी आप के अत्यन्त विकट है, वे जब्रिया आप के सम्बन्धी बनाये जाँयगे। यदि किसी नारी का अपने पति से विवाह बन्धन टूट गया है और वह उसे फिर नहीं देखना चाहती, तो कर्म के क़ानून के अनुसार वह पति उस को फिर कभी नहीं परेशान करेगा। जिन को वह देखना चाहती है, जिन से वह सम्बन्ध रखना चाहती है, उन्हीं को वह दूसरे जन्म में जानेगी।

इस विषय के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियां हैं। एक के बाद एक उन सब को उठाया जायगा। यूरोप और अमेरिका में व्यापक तौर पर स्वर्ग के सम्बन्ध में लोगों की जो भ्रान्त धारणा है उस पर हम विचार करते हैं। क्या हम उसे ईसाई स्वर्ग (Christian heaven) कहें ? नहीं। हम उसे पादड़ी स्वर्ग (Churchian heaven) कहेंगे। स्वर्ग की कल्पना में क्या वचन-विरोध का पुट (contradiction in terms) नहीं है ? स्वर्ग शब्द से वे एक ऐसा स्थान समझते हैं जहाँ वे सब के सब एक साथ रहेंगे। 'राम' आप से चाहता है कि कृपया आप तनिक सोचें, सत्य के लिये आप तनिक विचार करें। जहां आप परिच्छिन्न (limited) हैं, क्या वहां पूर्ण आनन्द हो सकता है ? परिच्छेद में क्या कोई भी सुख हो सकता है ? असम्भव, असम्भव। यदि आप के स्वर्ग में आप के प्रतियोगी होंगे,—वे सब जो अतीत में मर चुके हैं, और जो भविष्य में मरेंगे, और वे सब जो आज भारत वर्ष में, आस्ट्रेलिया में अमेरिका में, अथवा कहीं और मर रहे

हैं,—तो आप को क्या उस से सुख मिलेगा ? आप जानते हैं कि सिकन्दर सेलकर्क (Alexander selkirk) कहता था ।

"I an monarch of all I survey,
My right there is none to dispute"

"जहां तक मेरी दृष्टि जाती है उस का सम्राट मैं हूँ,
मेरे अधिकार का प्रतिबादी कोई नहीं है ।"

जब आप एक गाड़ी में बैठते हैं, तब आप सारी गाड़ी केवल अपने ही लिये होने की इच्छा करते हैं । यदि दूसरे लोग भीतर आ जाते हैं, तो आप उद्वेग पाते हैं । जब आप अपने कमरे में बैठे होते हैं और कोई आप से मिलने को आता है, तब आप नौकर से कहलवा देते हैं, कि आप घर पर नहीं हैं ।

तुम्हारे एक घर और जायदाद है, और एक दूसरे आदमी का भी वैसा ही घर और सम्पत्ति है, और गास्पेल तथा वेदों के सारे उपदेशों का अनादर करते हुए तुम्हारी इच्छा है कि तुम्हारे पास उस आदमी से अधिक दौलत होती । तुम चाहते हो कि तुम्हारा दुसरिहा (Rival, शरीक़) न होकर वह तुम्हारा मातहत होता । क्या यह तथ्य नहीं है कि कुछ ईसाई, असली ईसाई नहीं, किन्तु गलती से ईसाई कहे जाने वाले, यदि उनके साथ एक ही जहाज़ पर एक बौद्ध, मुसलमान या हिन्दू यात्री होता है तो, उसकी उपस्थिति से वे घृणा करते हैं ? "राम" यह अपने अनुभव से कहता है । वे उसकी उपस्थिति से घृणा करते हैं । इस (उसकी उपस्थिति) से उनका सुख नष्ट हो जाता है । और यदि स्वर्ग में तुम्हें अपने इर्दगिर्द सब

प्रकार के लोग देखना पड़ेंगे, ऐसे लोग जो क्राइस्ट और बुद्ध के समान तुमसे कहीं श्रेष्ठ हैं, तथा तुम से आगे बढ़े हुए वहां और लोग हैं, तो क्या तुम सुखी हो सकोगे? क्या उससे तुम सुखी रह सकोगे? तनिक इस पर विचार करो, एक क्षण भर इस पर विचारो।

जहां कहीं भेद है, वहां सुख नहीं हो सकता। असम्भव असम्भव। वह कौन सी बात है जो तुम्हारी प्रफुल्लता को नष्ट कर देती है? वह है दूसरों का दिखाई पड़ना। प्रत्येक व्यक्ति केवल एक होना चाहता है। हरेक व्यक्ति अद्वितीय, बिना दुसरिहा का होना चाहता है। तुम्हें उस प्रकार के स्वर्ग में कोई सुख नहीं होसकता जो तुमने ग़लती से समझ रक्खा है कि इंजील ने तुम्हारे लिये प्रदान किया है।

इंजील की हम किस प्रकार टीका कर सकते हैं जिस से कि उसमें रत्ती भर युक्ति प्रतीत हो? इंजील में हम पाते हैं, "हम स्वर्ग में मिलते हैं।" हम सब के सब स्वर्ग में मिलते हैं। स्वर्ग में अपने मित्रों से हम मिलते हैं। इसका क्या अर्थ है? वस्तुतः इसका क्या अभिप्राय है? इसका ठीक ठीक अर्थ करो, इसे समझो। क्या तुम नहीं जानते कि उसी इंजील में जिसमें लिखा है कि हम सब स्वर्ग में मिलते हैं यह भी लिखा हुआ है, "स्वर्ग का साम्राज्य तुम्हारे अन्दर है।" परमेश्वर का राज्य, सच्चा स्वर्ग तुम्हारे 'अन्दर' है, तुमसे 'बाहर' नहीं है। अपने से बाहर स्वर्ग की कल्पना न करो। आकाश में या नक्षत्रों के बीच में उसे न ढूँढ़ो। परमेश्वर पर तनिक करुणा करो। यदि वह परमेश्वर मेघों पर रहता है तो बिचारे गरीब को सर्दी हो जायगी। स्वर्ग तुम्हारे अन्दर है। परमेश्वर तुम्हारे अन्दर है।

तनिक देखो।

अपने को आनन्दमय ईश्वरीय ज्ञान की अवस्था में लाओ, परमेश्वर से पूर्ण अभिन्नता की अवस्था में अपने को डाल दो, यों कहिये कि, निर्वाण की दशा में प्रवेश करो, उस ईश्वरीय कल्याणमय दशा को प्राप्त करो और फिर तुम स्वयं स्वर्ग हो, न कि केवल स्वर्ग में। वहां तुम सब दुनिया से एक हो, वहां तुम सब मुर्दों और सब जीवितों और इस पृथिवी पर जिन लोगों के आविर्भाव होने की आशा है, उन सब से अभिन्न हो जाते हो। स्वर्ग तुम्हारे अन्दर है, और इस प्रकार से हम स्वर्ग में मिलते हैं। जीवन-मुक्त, इसी जीवन में मुक्त मनुष्य, सदा स्वर्ग में है, उसकी सब जीतों और सब मुर्दों से एकता है। भविष्य में इस दुनिया में जिन लोगों के आने की आशा है उन सब से उसकी एकता है। वह अनुभव करता और मानता है कि सब तारागण, सब ज्ञात प्राणी उसके अपने आत्मा हैं। वह अनुभव और भान (महसूस) करता है कि "मैं सच्चा परमेश्वर हूँ, सच्चा परम पुरुष हूँ, स्वयं तत्वस्वरूप हूँ, सारभूत हूँ, अज्ञेय परमेश्वर हूँ। मैं सर्व हूँ, और इस प्रकार 'सर्व' होने से मैं स्वर्ग में हूँ, और स्वर्ग में मैं हरेक व्यक्ति से मिलता हूँ"।

लोग इस दुनिया में अपनी लालसा की वस्तुओं के लिये ललाते हैं, किन्तु उन्हें वे पाते नहीं। यह क्या बात है कि वे उनको नहीं पाते हैं, और कैसे वे उनको पा सकते हैं? प्रेम की चोट खाये हुए, विकारग्रस्त (विषयी) इच्छा के मारे लोगों के दिल टूट जाते हैं, मुरझा जाते हैं तथा अपना समय और जीवन वे नष्ट कर देते हैं, एवं जीवन को तबाह

तक कर देते हैं। ऐसा क्यों है? क्योंकि ये स्वर्ग में नहीं मिलते, यही एक मात्र कारण है। यदि आप चाहते हैं कि आप के मित्र आप को मिलें, ऐ सांसारिक ऐश्वर्य्यों के भूखे दुनिया के लोगों! यदि आप चाहते हो कि संसार के वैभव आप को तलाश करें, ऐ जो अपने प्रेम पात्रों के लिये अपनी शक्तियोंको नष्ट करने वाले हैं, यदि आप चाहते हैं कि उन (मित्रों) को आप के प्यार करने के बदले वे आप का सा उत्कट प्रेम आप से करें तो, ऐ उच्च पदों की इच्छा रखने वाले और अकृतकार्य लोगों! राम की शिक्षा का अनुसरण करो, क्योंकि यही असंदिग्ध सुबंध (sesame) है, यही एक मात्र ताली है जो सब इच्छित पदार्थों के तालों को खोल देती है। तुम्हें स्वर्ग में मिलना होगा और तुम्हें प्रबन्ध करना होगा कि हरेक वस्तु तुम्हें खोजे। स्वर्ग में मिलने का क्या अर्थ है? प्रेम-भिक्षा में, प्रेम पाने की आकांक्षा में, प्रेम की खोज में, "क्या तुम मुझ से प्रेम करते हो" ऐसे क्षुद्र और स्वामित्व के भाव में ईश्वरपन का लेश भी नहीं है। मैं तभी तुम्हारे निकट खिचता हूँ और तुम्हारी बगल में अपनेको पाता हूँ जब तुम एक वाक्य में, जो हम दोनोंसे बड़ा है, अपने को ढाल कर मुझे (परिच्छिन्नात्माको) छोड़ देते और खो देते हो। यदि तुम अपने नयन मुझ पर गाड़ कर प्रेम की भीख मांगते हो, तो मैं दूर हट जाता हूँ। यह नियम है, यह अनिवार्य, अविनाशी, निष्ठुर अटल क़ानून है। जिस क्षण तुम इच्छा से ऊपर उठते हो, उसी क्षण इच्छा की वस्तु तुम्हें खोजती है, और जिस क्षण तुम मांगने, चाहने, ढूँढ़ने, उत्कट ललचाने का ढँग ग्रहण करोगे उसी क्षण तुम दुतकारे जाओगे। तब तुम्हें इच्छित वस्तु न मिलेगी, तुम्हें नहीं मिल सकती। (इच्छित) वस्तु से ऊपर उठो, उस से ऊपर खड़े

हो, और वह तुम्हें ढूँढ़ेगी। यही क़ानून है। यह कहा गया है, 'कि जो चीज़ तुम ढूँढ़ो वह तुम्हें दी जायगी, जिसे खटखटाओ वह तुम्हारे लिये खुल जायगा।" इसे समझने में गलती की जाती है। "ढूँढ़ोगे तो तुम कभी न पाओगे, खटखटाओगे, तो तुम्हारे लिये कभी न खुलेगा"। क्या यह यथार्थ नहीं है कि जब एक भिक्षु आप के पास आता है तो उसे देख कर आप को घृणा होती है? क्या यह ठीक नहीं है कि गरीब लोग सड़कों पर नहीं चलने पाते हैं जब वे जेल भेजे जाते हैं? राम ने जेल देखी और अधिकांश कैदियों का एक मात्र अपराध गरीबी थी। लोग कहते हैं, "दीन-आलय (poor house) को जाओ, तुम्हारी मौजूदगी से हमारा तिरस्कार होता है।" क्या ऐसा नहीं है?

तुम परमेश्वर के पास जाना चाहते हो; और फकीरी वृत्ति से, मलिन वस्त्रों से परमेश्वर के पास जाओगे, तो क्या तुम घुसने पाओगे? नहीं। जब तुम किसी राजा के पास जाते हो, तब तुम्हें अपनी सर्वोत्तम पोशाक पहनना पड़ती है। जब तुम परमेश्वर के पास जाते हो, तब तुम्हें निष्कामता की पोशाक पहनना पड़ेगी। यदि तुम ईश्वर को देखना चाहते हो, स्वर्ग के साम्राज्य को पाना चाहते हो, तो तुम्हें बेचाहपन की पोशाक पहनना पड़ेगी। तुम्हें आवश्यकता से परे होना होगा, तुम्हें इच्छा से ऊपर उठना होगा।

"First seek the kingdom of Heaven and everything else will be added unto you." That is the Law."

"पहले स्वर्ग का साम्राज्य ढूँढ़ो और फिर हरेक चीज़ तुम में आ मिलेगी। यह नियम है।"

कर्म का क़ानून कहता है "मनुष्य अपने भाग्य का आप ही स्वामी है। अपनी परिस्थिति और अपना अड़ोस पड़ोस हम आप बनाते हैं। हरेक बच्चा अपने बाप का बाप है। हरेक लड़की अपनी मा की मा है।" ये कथन उलटे जान पड़ते हैं, वे असंगत जान पड़ते हैं, किन्तु ये हैं पूर्ण सत्य, और सत्य के सिवाय और कुछ नहीं हैं।

कर्म के क़ानून के अनुसार, (राम कर्म के क़ानून में प्रवेश करने नहीं जा रहा है, किन्तु उस के केवल उस एक अंश में प्रवेश करेगा जिस का लगाव विचाराधीन विषय से है) जब तुम वस्तुओं की इच्छा करते हो, जब तक तुम उनके लिये उत्कट इच्छा और अत्यन्त लालसा करते रहते हो, वे तुम्हें नहीं दी जातीं। किन्तु अति लालसा और उत्कंठ इच्छा करने के एक ज़माने के बाद एक ऐसा समय आता है जब तुम उस इच्छा और अभिलाषा से, उस संकल्प से ऊब जाते हो, और अपना मुँह उधर से फेर लेते हो, तथा निराश और खिन्न हो जाते हो। तब वह (इच्छित वस्तु) तुम्हारे पास लाई जाती है। यह कर्म का क़ानून है।

आप जानते हैं कि किसी मनुष्य को उन्नति करने के लिये एक पैर अपना ऊपर उठाना और दूसरा नीचा करना होगा। इसी तरह कर्म के क़ानून का शासन चलने के लिये, आप की इच्छाओं की चरितार्थता और पूर्ति के लिये, उस समय का आना ज़रूरी है कि जब आप ऊपर उठते हों, इच्छा त्याग देते हों। और इस तरह इच्छा रखने तथा इच्छा त्याग देने से इच्छा की पूर्ति होती है। कर्म के क़ानून पर लिखने वाले साधारणतः प्रश्न के धन-पहलू (positive side) पर बड़ा ज़ोर देते हैं और ऋण-पहलू (negative

side) की उपेक्षा करते हैं। 'राम' तुम से कहता है कि तुम्हारी सब इच्छाएँ ज़रूर पूर्ण होंगी, तुम्हारी सब अभिलाषाएँ अवश्य सफल होंगी। हरेक वस्तु, जिस की तुम कामना करते हो, तुम्हारे सामने अवश्य लाई जायगी। किन्तु एक शर्त है। उस की प्राप्ति से पूर्व तुम्हारा ऐसी हालत में जाना ज़रूरी है कि जिस में तुम इच्छा त्याग दो। और जब तुम इच्छा त्याग दोगे, तभी वह पूरी होगी। 'राम' खयाल करता है कि यह अंश सब की समझ में नहीं आया है। इस का कारण यह है कि उन्हों ने 'राम' के पिछले व्याख्यान नहीं सुने हैं, जो हरमेटिक ब्रादरहुड (के स्थान) में दिये गये थे। अच्छा, यदि तुम इसे इस समय नहीं समझते हो, तो यह फिर कभी उठाया जायगा।

एक बात और। अधिकांश लोग अपने बँधन और अपने नाते बनाये रखना चाहते हैं ताकि उनके लगाव स्थायी हों और जुड़ जाँय। उच्चस्वर से घोषित करो, हर जगह कहो कि लौकिक संबन्धों, सांसारिक सम्पर्कों को क़ायम रखने और स्थायी बनाने की इच्छा पागलपन का विचार है। तुम नहीं कर सकते, नहीं कर सकते। यह आशा के विरुद्ध आशा करना है। त्यक्त आशा है। आप अपने सांसारिक संबंधो और लौकिक बन्धनों को स्थायी नहीं बना सकते। किसी भी सांसारिक वस्तु को तुम नित्य नहीं बना सकते। इस सत्य को अपने हृदयों में धंसने दो, अपने अन्तःकरणों में इसे गहरा घर करने दो कि लौकिक बन्धनों या सम्बन्धों को स्थायी बनाने की चेष्टा करना विक्षिप्त विचार है। राम इसे दोहराता है कि भाई! तुम ऐसा नहीं कर सकते। इस संसार में कुछ भी स्थायी नहीं है। इस संसार में कुछ

भी नित्य नहीं है। एक मात्र नित्य वस्तु तुम्हारे अन्दर का परमेश्वर है, वह परमेश्वर जो स्वयं तुम हो, वह तत्व जो कि तुम हो। यह देह स्थायी नहीं बनाई जा सकती। यह क्षुद्र शरीर नित्य स्थायी नहीं बनाया जा सकता। यदि तुम पांच अरब साल भी जीते रहो, तो भी मृत्यु आवेगी। सूर्य एक दिन मरता है, पृथिवी एक दिन मरती है, तारे मरते हैं, जिसका अर्थ परिवर्तन है। इन सब को बदलना पड़ता है, नित्य नहीं बनाये जा सकते, जैसे आप का शरीर हर क्षण बदल रहा है। सात साल के बाद यह बिलकुल नया हो जाता है वह एक बिलकुल नया शरीर हो जाता है।

इसी तरह तुम्हारे संबंध, तुम्हारे बंधन बदलते रहते हैं। वे नित्य नहीं बनाये जा सकते। यदि तुम्हारा उस ओर कुछ अनुराग है तो त्याग दो।

Rivers may flow uphill, winds may blow downward,
Fire may emit cold rays, the sun may shed darkness,
But this Law of the impermanence of worldly relations cannot be frustrated or foiled.

"नदियां चाहे उलट कर पहाड़ पर चढ़ें, पवन नीचे की ओर चाहे चले,
अग्नि चाहे ठंढी किरणें उगले, सूर्य चाहे अन्धकार फैलावे,
किन्तु सांसारिक रिश्तों की अनित्यता का यह क़ानून विफल या व्यर्थ नहीं किया जा सकता"। यदि तुम्हारा विचार

कुछ और है तो तुम गलती पर हो। ठीक नदी का सा हाल है। लकड़ी के लट्ठे जलतल पर तरते हुए आते हैं, एक लट्ठा एक ओर से आता है और दूसरा किसी दूसरी तरफ से। एक क्षण के लिये उनका मिलन होता है, एक पल भर उनका लगाव रहता है और फिर वे जुदा हो जाते हैं। एक तेज़ लहर आती और उनको अलग कर देती है। संभव है कि नदी में बहते हुए ये लट्ठे फिर मिलें, किन्तु फिर उनको किसी समय अलग होना पड़ेगा। ठीक ऐसे ही तुम्हारे जीवन में, नित्य प्रति के रोज़ के काम काज के जीवन में, पिता और माता, भाई और बहनें एक साथ रहते हैं, किन्तु हर चौबीसवें घंटे अलग हो जाते हैं। बहुत दफे वे पुनः चन्द मिनटों के लिये मिलते हैं, उसके बाद वे अपने २ पृथक कमरों या दफ्तरों में चले जाते हैं। तुम्हारे संबंधों और दूर के मित्रों का यही हाल बड़े पैमाने पर है। सदा सर्वदा तुम साथ नहीं रह सकते। यदि यह मामला है तो बच्चों का खेल क्यों करते हो ? जो सदा टिकता है, जो नित्य और शाश्वत है, उससे फिर अधिक सरोकार क्यों नहीं रखते ? चपल संबंधों की अपेक्षा जो नित्य है उसके लिये फिर अधिक चिन्ता क्यों नहीं करते ? नित्य स्थायी तत्व का अधिक विचार क्यों नहीं करते ? जिससे तुम पृथक नहीं हो सकते, उसे पाने और अनुभव करने का यत्न क्यों नहीं करते ? और स्थायी तत्व, वास्तविक नित्यता के बलिदान का यत्न क्यों करते हो ? शीघ्र सटकते हुए अस्थायी नातों के लिये उस (असली तत्व) की कुर्बानी क्यों करते हो ?

भारतवर्ष में एक नवविवाहित युवती थी। वह अपनी सास और अपनी ननदों या जेठानियों-देवरानियों के साथ

बैठी हुई मज़ेदार गपशप कर रही थीं। इस नई दुलहिन का पति उपस्थित नहीं था। इस नई दुलही की जेठानियों या ननदों ने इस के पति के विरुद्ध कुछ वचन कहे। 'राम' मौजूद था। 'राम' ने इस दुलहिन के मुख से ये मधुर शब्द सुने। उसने कहा, "तुम्हारे लिये जिन्हें उन (मेरे पति) के साथ केवल कुछ दिन रहना है, मैं दूल्हे से, जिसके साथ मुझे अपनी सारी ज़िन्दगी बितानी है, बिगाड़ कर बच्चों का खेल न करूँगी।"

उस दुलहिन में जितनी बुद्धि थी, उतनी बुद्धि रक्खो। ये सब सांसारिक बन्धन सदा न टिकेंगे। तुम्हें अपना सारा जीवन सच्चे आत्मा के साथ बिताना है, वह नित्य है; तुम उससे संबन्ध नहीं तोड़ा सकते। इस चपल वर्तमान काल के लिये तुम्हें सच्चे आत्मा से नाता न तोड़ना चाहिये। तुम अपने आप को बेचते क्यों हो? तुम वह जीवन क्यों निर्वाह करते हो जो तुम्हें क्षुद्र बनाता है? अन्तर्गत परमेश्वर को आप क्यों नहीं अनुभव करते हैं, सच्चे आत्मा से आप क्यों अलग होते हैं? बुद्धिमान हो!

बुद्ध भगवान् के पास एक आदमी गया, और उनसे उनके पिता के झोंपड़े को चलने को कहा। आप जानते हैं वही बुद्ध भगवान् जो राजकुमार थे, एक समय भिक्षु थे। उन्हों ने सब त्याग दिया और भिक्षु हो गये। भिक्षु के बाने से वे दरबदर घूमते थे, किसी से कुछ मांगते नहीं थे। यदि कोई उनके कमंडल में, जिसे वे अपने हाथ में लिये रहते थे, कुछ डाल देता था तो अच्छा, अन्यथा वे शरीर के लिये, इस सांसारिक जीवन के लिये एक तिनका भर भी परवाह नहीं करते थे। वे अपने पिता के राज्य में गये

और भिक्षु के वस्त्रों में वहां वे सड़कों पर घूम रहे थे। उन्हें भिक्षु कहना गलती है। वह फकीरी नहीं है, वह शहंशाही है। वह कोई वस्तु नहीं ढूँढ़ता, वह कोई चीज़ नहीं मांगता। वह अगर नष्ट होजाय तो भी क्या? उसे नष्ट होने दो; क्या परवाह है। भोजन या वस्त्र मांगने वह तुम्हारे पास नहीं आता।

उस भेष में वह सड़कों पर घूम रहा था। उसके पिता ने यह हाल सुना, वह उसके पास गया, और बिलखता हुआ बोला, "बेटा! प्यारे कुमार! मैंने ऐसा कभी नहीं किया, तुम जो पोशाक पहने हो वह मैंने कभी नहीं पहनी। मेरे पिता अर्थात तुम्हारे बाबा ने यह फकीरी पोशाक कभी नहीं धारण की, तुम्हारा परबाबा भिक्षु बन कर सड़कों पर कभी नहीं घूमा। हम लोग राजा रहे हैं, तुम राजघराने के हो, और तुम यह फकीरी बाना धारण करके आज सारे वंश को क्यों ज़लील और लज्जित कर रहे हो? कृपया ऐसा न करो, दया करके यह न करो। मेरी आबरू रक्खो।"

बुद्ध भगवान् ने मुसकुराते हुए उत्तर दिया, उसने मुसकुराते हुए कहा, "महाराज! महाराज! मैं जिस वंश का हूँ उससे आगे मैं देखता हूँ, मैं अपने पूर्वजन्मों को देखता हूँ, और मैं देखता हूँ कि जिस वंश का मैं हूँ वह सदा भिक्षुओं का वंश रहा है। इसका दृष्टान्त इस तरह पर दिया जा सकता है।

यह एक सड़क है और वह दूसरी सड़क आती है। बुद्ध देव कहता है, "महाशय तुम अपने जन्मों से उस राह से आते हो, और मैं इस राह से चला आरहा हूँ, और

इस जन्म में हम लोग चौराहे पर मिल गये हैं। अब मुझे अपनी राह जाना है और तुम्हें अपनी राह जाना है।"

बन्धन कहां है? संबंध कहाँ है? आप कहते हैं कि आप के अपने बच्चे हैं। आप "राम" को क्षमा करें, यदि वह ऐसी बातें कह दे कि जो इस देश की सभ्यता के द्वारा असभ्य समझी जाती हैं। आप कहते हैं कि ये बच्चे आपके हैं। आप कहते हैं कि यह मेरा पुत्र है, मेरे मांस का मांस, मेरे रक्त का रक्त, मेरी हड्डी की हड्डी है। अरे, यह मैं स्वयं हूँ, यह मेरा पुत्र है, ओह प्यारा छोटा बेटा! नन्हा मधुर बच्चा! और तुम उसे अपने कलेजे से चिपटाते हो, तुम उसे अपने पास रखते हो। किन्तु तनिक अपने तत्वज्ञान की परीक्षा तो करो। वह बच्चा तुम्हारा है और तुम चाहते हो कि यह गांठ सदास्थायी हो जाय। क्या आप कृपया सत्य के नाम पर उत्तर देंगे कि, यदि बच्चा आप का पुत्र है और आप की देह से बच्चा पैदा होने के कारण आप अपने इस सम्बन्ध को कायम रखना चाहते हैं, तो जुओं का क्या होगा? क्या वे तुम्हारी देह से नहीं पैदा हुई हैं? क्या वे तुम्हारे पसीने के बच्चे नहीं हैं? क्या वे तुम्हारे खून के खून नहीं, क्या उन का सब खून तुम से नहीं लिया गया है? क्या (उन का) समग्र जीवन तुम्हारा जीवन नहीं है? तनिक जवाब दीजिये। एक तरह के बच्चे की हत्या करना, एक तरह के बच्चे को नष्ट करना और दूसरी तरह के बच्चे को चूमना चाटना तथा अपने सारे प्रेम की उस पर वर्षा करना कितना अन्याय है, कैसा युक्ति विरुद्ध है। अपने तर्क को तो देखो। "राम" का यह अभिप्राय नहीं है कि आप को अपने बच्चों के प्रति निठुर हो

जाना चाहिये, कि आप उनकी ज़रूरतों की ओर ध्यान न दें। मैं यह बिलकुल नहीं चाहता। "राम" का उपदेश है कि आप को सम्पूर्ण संसार अपना आत्मा समझना चाहिये, और आप के अपने बच्चे भला इस भाव) से वर्जित क्यों कर दिये जांय? राम (की बातों) का अनर्थ न करना। 'राम' यह कहता है, कि "आपके पारिवारिक बन्धन आप की अपनी उन्नति को न रोकने पाये। अपने पारिवारिक सम्बन्धों को अपने मार्ग में बाधक न बनने दो। तुम्हारी अग्रसर गति को वे रोकने न पावें।"

जब इस शरीरने, अर्थात् तुम्हारे अपने आपने, जिसे तुम "राम" कहते हो, संन्यास ग्रहण किया था, पारिवारिक संबंध और सांसारिक पदवी का त्याग किया था, तब कुछ लोगों ने कहा था, "महाशय! यह क्या बात है कि आपने अपनी स्त्री, बच्चे, नातेदारों, और विद्यार्थियों के हकों का खयाल नहीं किया, जो आप से सहायता और उपकार की आशा रखते थे; आप ने उनके दावों का बिलकुल लिहाज़ क्यों नहीं किया?" यह प्रश्न किया गया था "राम" कहता है, "आप का पड़ोसी कौन है?" तनिक देखिये। जिस मनुष्य ने "राम" से यह सवाल किया था वह महाविद्यालय में उस (राम) का सह-अध्यापक था। राम ने उससे कहा। "आप एक अध्यापक हैं, आप कालेज में दर्शन-शास्त्र पढ़ाते हैं, अब क्या आप कह सकते हैं कि आप की स्त्री और बच्चों में भी उतनी ही विद्या है जितनी आप में? क्या आप कह सकते हैं कि आप की चाची और दादी भी उतनी ही विद्वान हैं जितने आप हैं? क्या आप के चचेरे भाइयों को भी इतना ही ज्ञान है?" उसने कहा,

"नहीं, मैं अध्यापक हूं।" "राम" ने कहा, "यह क्या बात है कि आप विश्वविद्यालय में आते और पढ़ाते हैं, किन्तु आप अपने छोटे बच्चों, अपनी स्त्री, और अपने नौकरों को नहीं पढ़ाते? आप अपनी दादी और अपने चचेरे भाइयों तथा अपनी चाची को क्यों नहीं पढ़ाते? यह क्या बात है? उसने कहा कि वे मेरे पढ़ाने को समझ नहीं सकते। तब उसे निम्न लिखित बातें समझाई गईं।

देखो। ये तुम्हारे पड़ोसी नहीं हैं। ये नौकर, यह दादी, स्त्री, बच्चे, और तुम्हारे ये कुत्ते भी तुम्हारे पड़ोसी नहीं हैं। यद्यपि कुत्ता तुम्हारा निरन्तर संगी है, कभी तुम्हारा साथ नहीं छोड़ता, और अज्ञानी की दृष्टि में आपका सब से बड़ा साथी है, किन्तु आप जानते हैं कि कुत्ता, नौकर, और मूर्ख चाची तथा दादी आपके पड़ोसी नहीं हैं। आप कौन हैं? आप शरीर नहीं हैं, आप शुद्ध आत्मा हैं, किन्तु यूरोपीय तत्वज्ञानी होने के कारण आप यह स्वीकार नहीं करते। आप चित्त हैं, आप के पड़ोसी वे हैं जो सदा आप के साथ उसी उच्च रेखा में रहते हैं जहां आप का चित्त रहता है। सब विद्यार्थी, शास्त्री, विशारद, अपने पढ़ने के कमरों में उन्हीं पुस्तकों पर ध्यान लगाते हैं, उसी विषय का चिन्तन करते हैं, वही चीज़ पढ़ते हैं जो आप पढ़ते हैं। आप का चित्त उन्हीं विषयोंमें रमता है जिनमें उनका, और वे आप के पड़ोसी हैं। जब आप अपने पढ़ने के कमरे में होते हैं, लोग कहते हैं कि आप पठनागार (reading room) में हैं। ईमान से कहियेगा कि आप उस समय कमरे में होते हो या कि अपने विचारों में होते हो। आप पढ़ने के कमरे में नहीं रहते हैं, यद्यपि कुत्ता आप की गोद

में बैठा होता है, यद्यपि आप के बच्चे कमरे में आते हैं, वे आप के लिये कुछ भी नहीं होते, आप तो वहां दार्शनिक लोक में होते हैं, और उस ऊँचाई पर आप के पड़ोसी वे विद्यार्थी होते हैं जो अपने अपने घरों में वही विषय पढ़ रहे हों। ये आप के पड़ोसी हैं, आप के अत्यन्त समीपी पड़ोसी हैं, और इस प्रकार से आप अपना सहायक हस्त अपनी चाची और दादी और कुत्ते और नौकरों की अपेक्षा, जो आप के पड़ोसी नहीं हैं, विद्यार्थियों तक अधिक पहुँचा सकते हैं। आपका पड़ोसी वह है जो आपकी वृत्ति के अधिक नगीच रहता है, जो उसी लोक में रहता है कि जिस (लोक) में आप रहते हैं। आपका पड़ोसी वह नहीं है जो उसी घर में रहता है; चूहे और मक्खियां उसी घर में रहती हैं, कुत्ते और बिल्लियां उसी घर में रहती हैं।

अध्यापक! मुझे बताओ, यदि तुम्हारे हाथ की बात हो, तो तुम कहां पैदा होगे? क्या आप उसी अपढ दादी या चाची के परिवार में पैदा होंगे? नहीं, नहीं। आप उस कुटुम्ब में पैदा होंगे जहां के लोग आप के जैसे चित्त के हों, जहां के लोग ऐसे हों कि आस-पास और इर्द-गिर्द आप के स्वभावानुकूल हों। आप विभिन्न कुटुम्ब में उत्पन्न होंगे, इस लिये आप हर समय अपने पारिवारिक संबंध बदल रहे हैं। प्रेम का क्या अर्थ है? प्रेम का केवल इतना ही अर्थ है कि आप की भावना वैसी ही है जैसी दूसरे की। और अधिक कुछ नहीं। आप एक मनुष्य पर प्रेम करते हैं; उसके स्वार्थ, उसके मज़े, उसकी तकलीफें ठीक आप की ही सी हैं। वही पदार्थ आप को पीड़ा पहुँचाते हैं जिनसे उस को पीड़ा पहुँचती है, जो पदार्थ उसे सुखक(

होते हैं, वही आप को भी सुख देते हैं, वही पदार्थ उसे हर्ष देते हैं जो आप के हर्ष देते हैं। यह प्रेम है। आप किसी मनुष्य को उसके लिये प्यार नहीं करते हैं, आप उसमें अपने आप को प्यार करते हैं, और कुछ नहीं। आप केवल अपने आप को प्यार कर सकते हैं। तीन मनुष्य हैं, क, ख और ग, अथवा, जैसा कि हम रासायनिक सूत्र के रूप में रख सकते हैं, क और ख में कुछ सामान्य बात है, और क तथा ग में भी कुछ सामान्य बात है, या क में और ग में ख से अधिक सामानता है, इस लिये क ख की अपेक्षा ग की ओर अधिक आकृष्ट होगा।

इस प्रकार आप के पारिवारिक बंधन टूटते और पुनः पुनः टूटते तथा फिर २ जुड़ते हैं। इस प्रकार से प्रेम का अर्थ केवल अपने आप का कुछ (अंश) किसी दूसरे मनुष्य में अनुभव करना वा पहचानना है। किसी मनुष्य को पूर्णतया और एक मात्र आप का प्रतिरूप होने दो, तो आप उसके लिये पूर्ण प्रेम स्वरूप हो जायंगे।

इससे हम दूसरे विषय पर पहुँचते हैं जिसे आज "राम" न उठावेगा। वह बड़े महत्त्व का विषय है। वह विषय निर्भीकता है। भय की सृष्टि कैसे होती है, भय का कारण क्या है? यह दिखाया जायगा कि यही अनुराग, अपने बन्धनों और सम्बन्धों को हमेशा क़ायम रखने की यही इच्छा, सम्पूर्ण भय की जड़ है। लोग कहते हैं, न डरो, डरो मत। कितने अतार्किक व हैं! मानो भय तुम्हारे वश में है और तुम पर सवार नहीं है। भय की एक दवा बताई जायगी, किन्तु "राम" उस विषय को छोड़ता है, और वह फिर कभी उठाया जायगा।

एक कविता, जो एक उपनिषद का भाषान्तर है, पढ़ी जायगी, और तब बस। "राम" चाहता है कि हिन्दुस्तान का कम से कम एक शब्द तो आप लोग सीखें। अनुवाद पूरा नहीं है, फिर भी उससे कुछ आशय निकल आयगा।

The untouched soul, greater than all the
Worlds, (because the worlds by it exist),
Smaller than subtle ties of things minutest,
Last of ultimatest,
Sits in the very heart of all that lives,
Resting, it ranges every where ! Asleep
It roams the world, unsleeping; How can one
Behold divinest spirit, as it is
Glad beyond joy existing outside life,
Beholding it in bodies, bodiless,
Amid impermanency permanent,
Embracing all things, yet in the midst of all
The mind enlightened casts its grief away.

Om ! Om !!

निर्लेप-आत्मा, सब लोकों से महान (क्योंकि लोक
इस में टिके हैं),
छोटी से छोटी चीज़ों की सूक्ष्म ग्रंथियों से भी सूक्ष्म,
सब से अन्तिम से भी अन्तिम,
प्राणियों के हृदय में बैठा है,
आराम करता हुआ, वह सर्वत्र प्रबन्ध बांधता है,
सोता हुआ
वह संसार में घूमता है, अनिद्रित; कैसे कोई

परमेश्वरीय आत्मा को देख सकता है, क्योंकि वह
जीवन से परे उपस्थित,हर्ष से भी अधिक प्रफुल्लित है।
उसे शरीरों में देखते हुए वह अशरीरी,
अनित्यता के मध्य में वह नित्य,
सब वस्तुओं का आलिंगन करता हुआ, तथापि सब के मध्य में
प्रबुद्ध मन हुआ वह अपने शोक को दूर फेंक देता है।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

मैं प्रकाश स्वरूप हूं।

१३ जनवरी १९०४ को डेनवर, कौलोरेडो में दिया हुआ व्याख्यान।

शुद्धात्मा (सत्यस्वरूप) क्या है ? देह सत्यस्वरूप नहीं है, न चित्त ही असली अपना आप है, न यह प्राण ही वास्तविक आत्मा है। आप कैसे जानते हैं कि दुनिया है ? अपनी चेतना (Consciousness) के द्वारा। आप की चेतना को भी तीन प्रकार के परिवर्तनों या वृत्तियों के अधीन होना पड़ता है। एक जागृत चेतना है, एक स्वप्न शील चेतना है. और गाढ़ निद्रित चेतना भी है। आप की चेतना तापमापक (thermometer) या वातमापक (barometer) यंत्र के समान है। वह ताप (temperature) या संसार की गुरुता (pressure) को मापती है।

जागृत दशामें चेतना सूचित करती है कि संसार ठोस है, कठोर है, अपने क़ानूनों और नियमों में ठसा हुआ है। स्वप्नावस्था में चेतना का निर्णय बिलकुल भिन्न है। किन्तु स्वप्न और निद्रा की अवस्थाएं भी ठीक उतनी ही प्रबल हैं जितनी कि जागृत दशा। फिर हम देखते हैं कि आप का निद्रागत अनुभव ठीक उतनाही समय लेता है जितना कि जागृत अनुभव। अपने जीवन में आप उतना ही सोते हैं जितना जागते हैं। एक बच्चा, मानो, हर समय निद्रित ही है। यह अनुभव सारे संसार को होता है। गाढ़ निद्रा या स्वप्नावस्था की चेतना के निर्णय जागृत अवस्था की चेतना के निर्णय या ज्ञान का पूर्ण रूप से खंडन करते हैं।

अब वास्तविक (या सत्य) वह है जो कलह, आज,

और सदा वही (एकसां) है। सभी को सत्य की यह कसौटी मान्य है। जो क़ायम रहता है वह असली है। अधिष्ठान अर्थात् द्रष्टा के स्थिति-बिन्दु से यह चेतना तीन विभिन्न रूप ग्रहण करती है। जागृत दशा में यह चेतना देह से अपनी अभेदता स्थापित करती है, और जब आप "मैं" शब्द का व्यवहार करते हैं, तब आप को इस शरीर, इस चेतना का बोध होता है। स्वप्नशील अवस्था में वह बिलकुल दूसरी ही दशा धारण करती है। आप बदल जाते हैं। स्वप्न शील द्रष्टा वैसा ही नहीं है जैसा कि जागृत-द्रष्टा है। आप अपने स्वप्नों में अपने को निर्धन पाते हैं, यद्यपि आप धनी हैं। आप अपने को शत्रुओं से घिरा हुआ पाते हैं, आप का घर अग्नि से नष्ट हो जाता है, और आप विवस्त्र जीते बचते हैं। अपने स्वप्न में आपने चाहे कुछ पानी पिया हो किन्तु जागने पर आप अपने को प्यासा पाते हैं। स्वप्नशील द्रष्टा जाग्रत द्रष्टा से भिन्न है। इस तरह चेतना स्वप्न की अवस्था में एक रूप धारण करती है; और जागृत अवस्था में दूसरा, और गाढ़ निद्रावस्था में वह तीसरा रूप धारण करती है। आप की चेतना तब (गाढ़ निद्रा में) शून्यता से अपनी अभेदता स्थापित करती है। आप कहते हैं "मुझको बड़ी गहरी नींद आई, मैंने कोई स्वप्न भी नहीं देखा।" गाढ़ निद्रा की दशा में आप में कोई चीज़ है जो बराबर जागती रहती है, जो नहीं सोती वही आपका वास्तविक आत्मा (स्वरूप) है। वह विषयाश्रित चेतना से पृथक है, वह शुद्ध चेतना है। वह आप का स्वरूप (अपना आप) है।

एक मनुष्य आता और कहता है, "कल्ह रात को बारह

बजे मैं ब्राडवे स्ट्रीट पर था, और मैं ने कुछ नहीं देखा। उस समय वहां एक भी व्यक्ति नहीं था।" हम उससे कहते हैं कि वह अपना बयान लिख दे कि उक्त सड़क पर अमुक समय पर एक भी व्यक्ति मौजूद नहीं था। वह मनुष्य कहता है कि यह बयान सत्य है, क्योंकि मैं प्रत्यक्षदर्शी गवाह हूँ। तब प्रश्न किया जाता है, "तुम कोई नहीं हो या कोई हो ? यदि यह बयान तुम्हारे प्रमाण पर हम मानें, तो यह आत्मविरोधी है। यदि यह बयान सत्य है तो आप वहां मौजूद थे।"

जब कोई गाढ़तम निद्रा में है तब वह जागने पर कहा करता है कि मैंने कोई स्वप्न नहीं देखा। हम कहते हैं, भाई ! तुम यह बयान तो करते हो कि वहां कुछ नहीं था, किन्तु इस बयान के सही होने के लिये तुम्हें आकर गवाही देना पड़ेगी। यदि आप वस्तुतः गैरहाज़िर थे तो यह गवाही आप कैसे देते हो ? आप में कोई चीज़ ऐसी है जो उस गाढ़ निद्रा में भी जागती है। वह आप का वास्तविक स्वरूप (आत्मा) है, वह परम संकल्प (will) या परम चेतना है।

देखिये इससे सारे संसार का प्रसार कैसे होता है। नदियों को देखिये। उनकी तीन दशाये होती हैं, एक हिमानी नद (glacier) की, दूसरी छोटे चश्मों और नालों की। बरफ पिघली और नदी बहुत ही कोमल शान्त और शिष्ट अवस्था में होती है। तीसरी दशा वह है जब नदी पहाड़ों को छोड़ कर मैदान में उतर आती है और बड़ी उत्पातिनी होती है तथा कीचड़ से भर जाती है। ये तीन दशाये हैं।

पहली दशा में पहाड़ों में, बरफ में, सूर्य का प्रतिबिम्ब नहीं दिखाई पड़ता था। दूसरी और तीसरी में वह (सूर्य का

प्रतिबिम्ब) दिखाई देता है। दूसरी दशा में नदी जहाज़ या नौका चलने के लायक नहीं थी। वह किसी व्यावहारिक काम की नहीं थी। किन्तु तथापि वह बड़ी सुन्दर थी। तीसरी दशा में वह नाव या जहाज़ चलने के लायक है और खेतों तथा घाटियों को भी उपजाउ बनाती है। सो हम देखते हैं कि दो चीज़ें मौजूद थीं, एक सूर्य और दूसरी नदी।

एक तुम में सूर्यों का सूर्य है, जो गाढ़ निन्द्रावस्था में परमेश्वर है। वह सूर्यों का सूर्य जमी हुई बरफ पर चमकता है। वह सूर्यों का सूर्य, अचल, अव्यक्त, साक्षी है। जब वह सूर्य उस आप में की शून्यता पर कुछ समय तक चमकता रहता है, गाढ़ निन्द्रावस्था में कहिये, आप में सूर्यों का सूर्य अपने को चमकती, गरम करने वाली हालत में रखता है,और आप के कारण शरीरको पिघलाता है,तब उस शून्यता से स्वप्नशील दशा प्रवाहित होती है। यही इंजील कहती है, "परमेश्वर ने शून्य से संसार की सृष्टि की।" परमेश्वर था और वह, वह था जो पहली दशामें शून्य कहा जाता है। जिस तरह सूर्य बरफ से नदियां पैदा करता है, ठीक उसी तरह जब सूर्यों का सूर्य, तुम में का परमेश्वर देखने मात्र शून्य पर—जिसे हिन्दू माया कहता है—चमकता है, तब उसी दिन द्रष्टा और पदार्थ बाहर बह निकलते हैं। द्रष्टा के अर्थ ज्ञाता है और पदार्थ वह है जो देखा वा जाना जाता है।

स्वप्नावस्था का अनुभव जाग्रतावस्था के अनुभव के लिये वैसा ही है जैसा नन्हा, छोटा नाला महान नदी के लिये है। लोग कहते हैं कि मनुष्य परमात्मा के रूप (मूर्ति) में बना है। गाढ़ निद्रा में आप में कोई अहंभाव नहीं है। किन्तु स्वप्न और जागरण की अवस्था में आप में अहंभाव

है। स्वप्न और जागने की दशाओं में तुम परमेश्वर का प्रतिबिम्ब रखते हो। असली आत्मा परमेश्वर है, सूर्य है, न कि यह प्रतिबिम्बित सूरत (मूर्ति)। स्वप्नों में आप सब प्रकार की ची चीजें देखते हैं। किसी बस्तु को (स्वप्न में) देखने के लिये, किस प्रकाश में आप को उसे देखना पड़ता है। वह चन्द्रमा का आकाश है या नक्षत्रों का प्रकाश है, या सुर्य है जो हमें स्वप्न में बस्तुओं को देखने की योग्यता देता है? किसी का भी नहीं। फिर वह कौन सा प्रकाश है जो स्वप्नों में सब प्रकार की वस्तुयें देखने के योग्य बनाता है? वह आप के अन्दर का प्रकाश है। वह वही प्रकाश है जो प्रत्येक पदार्थ को दृष्टि गोचर बनाता है। यह प्रकाश जो स्वप्नों में सब प्रकार की वस्तुओं को देखने की शक्ति आप को देता है केवल गाढ़ निद्रावस्था में स्वच्छन्द रूप से चमका था। स्वप्नों में वह पदार्थों को अवलोकनीय बनाता है। इस तरह पर गाढ़ निद्रावस्था में और स्वप्नावस्था में भी वह प्रकाश निरन्तर रहता है। स्वप्न में यदि आप चन्द्रमा देखते हैं, तो चन्द्र और साथ ही चन्द्रिका के भी अस्तित्व का कारण अन्दर का प्रकाश है।

आज यह सिद्ध किया गया है कि तुम प्रकाश स्वरूप हो, तुम प्रकाशों के प्रकाश हो। जैसे कि नदी के संबंध में जानते हो कि उसके मूल में भी वही सूर्य है जो मुहाने पर है, उसी तरह असली आत्मा तुम में गाढ़ निद्रा, स्वप्न और जागरण की दशाओं में वही है। तू वह है। अपने को उस अन्तर्गत आत्मा से अभेद कर दो, तब तुम बलिष्ट और शक्ति से पूर्ण होते हो। यदि आप अपने आप की चंचल परिवर्तन-शील वस्तुओं से अभेदता कायम करते हैं, तो यह उस

लुढ़कते हुए पत्थर के समान है कि जिसमें काई या सेवार नहीं जमती। सूर्य केवल एक ही नदी के उत्पति स्थान, बीच और मुहाने पर वही नहीं है किन्तु दुनिया की सब नदियों में भी वही है।

तुममें जो प्रकाशों का प्रकाश है, वह दुनिया के सब लोगों की गाढ़ निद्रा, स्वप्न शील और जाग्रत दशाओं का वास्तविक आत्मा है। वह प्रकाश उन पदार्थों से भिन्न नहीं है जिन पर वह चमकता है। तुम वह प्रकाशों के प्रकाश हो। इस विचार (ख्याल) पर टिको कि तुम प्रकाशों के प्रकाश हो। वह मैं हूँ। मैं प्रकाशों का प्रकाश हूँ। प्रकाशों के प्रकाश से अपनी अभिन्नता क़ायम करो। वही आपका असली सत है। कोई डर नहीं, कोई झिड़कियां नहीं, कोई शोक नहीं, सर्वत्र वही है। प्रकाशों का प्रकाश, अविच्छिन्न, निर्विकार, कल्ह और आज तथा सदा एकरस। मैं प्रकाशों का प्रकाश हूँ। सारी दुनिया केवल लहरें, केवल तरंगे और चक्कर जान पड़ती है।

"क्षुद्रात्मा वा परिच्छिन्नात्मा" को जो पर्दा घेरे हुए है उसे हटाने में निम्न लिखित उपाय बहुत ही उपकारी पाया जायगा।

लोग कहते हैं 'सैर करते समय बातचीत के लिये एक मित्र होना चाहिये।' नीचे लिखे कारणों से यह भ्रमजनक वा असत्य है:—

प्रथम—जब हम अकेले चलते हैं, तब हमारी सांस स्वाभाविक, तालबद्ध, और स्वास्थ्यकर होती है। इस कारण से, कांट (kant) अपने जीवन के अन्तिम भाग में सदा अकेला सैर करता था ताकि सांस का ताल बराबर बना

रहे, और उसने अच्छी दीर्घ आयु पाई। जब हम अकेले चलते हैं, तब हम नथुनों से सांस ले सकते हैं, किन्तु जब हम बातें करते होते हैं, तब हमें अपने मुखों से सांस लेनी पड़ती है। नथुनों से सांस लेना सदा शक्तिवर्द्धक है और फेफड़ों को बलवान बनाता है। परमेश्वर ने मनुष्य के नथुनों में सांस भरी और मुख में नहीं। हम मुख से सांस बाहर चाहे निकालें किन्तु भीतर सांस सदा नथुनों से हमें खींचना चाहिये। जो हवा फेफड़ों में प्रवेश करती है वह नथुनों के बालों से छन कर जाती है।

द्वितीय—जब हम अकेले चलते होते हैं तब हमारी विचार करने की अति सुन्दर वृत्ति होती है और उत्कृष्ट विचार उस समय मानों हमें खोजते हैं। लार्ड क्लाइव को किसी तरह इस रहस्य का पता लग गया और भारतीय राजनीति के जब किसी अत्यन्त पेचीदा मसले पर उसे विचार करना होता था, तब वह टहलने लगता था। इस तरह टहलना बुद्धि के परिशीलन में बहुत ही उपकारी है। जब हम संगति में चलते हैं, अथवा ऐसे लोगों के साथ चलते हैं जो सदा अपने विचार बलात् हम पर लादते रहते हैं.तब हम मौलिक और उत्कृष्ट विचारों को अपने पास आने से रोक देते हैं जो अन्यथा हम पर अवश्य कृपा करते।

तृतीय-आध्यात्मिक स्थिति-बिन्दु से। अकेले चलते समय चित्त विभाजक शक्तियों और प्रतिकूल (विपरीत) तत्वों को झिटक देता है और उसे अपने केन्द्र तथा आत्मा की विश्रान्ति रूप कल्पना (भावना) का लाभ होता है,और स्वयं उसे भोगने का वह अवसर पाता है। सम्पूर्ण कायव्यूह (शरीर-यंत्र) में तेज या बल का संचार होजाता है।

यह आत्म-सूचना(बुद्धि) अपने आपको दो कि तुम आनन्द स्वरूप हो। मैं प्रकाशों का प्रकाश हूँ। अपनी उच्चतर शक्तियों का उत्कर्ष करने में इस विचार पर ज़ोर देना चाहिये। चांदनी में या प्रातःकाल चलने में अकथ लाभ हैं जिनका लगाव इसी से है। अस्त या उदय होते हुए सूर्य, की ओर (मुख करके) चलो, नदियों के तटों पर सैर करो जहां शीतल पवन के झकोरे आते हों वहां टहलो, तब तुम अपने को प्रकृति से एकतान पाओगे, विश्व से एकताल पाओगे।

ॐ! ॐ!! ॐ!!!

केन्द्र-च्युत न हो।

९ जून १९०३ को कैसिल स्प्रिंग्स में दिया गया व्याख्यान।

यहां के लोगों का ढँग यह है कि भोजन करते समय बातचीत करते रहते हैं, किन्तु भारत में दूसरी ही चाल है। वहां भोजन करते समय बातचीत नहीं की जाती। आप जानते हैं कि भोजन करते समय प्रत्येक व्यक्ति को वह (खाने की) क्रिया मानों धार्मिक भाव से करनी पड़ती है, उसे पवित्र कृत्य बनाना पड़ता है। आप के मुख में जाने वाले भोजन के हरेक ग्रास के साथ आप को इस विचार पर ध्यान देना होता है कि यह कौर (ग्रास) बाहरी क्षिति का प्रतिनिधि है और इस प्रकार मैं सम्पूर्ण विश्व को अपने में सम्मिलित कर रहा हूँ। और वे खाते समय निरन्तर इस विचार का अपने चित्त में रखते हैं और ॐ जपते रहते हैं, मनसे अनुभव करते और समझते जाते हैं कि सम्पूर्ण संसार मुझमें सम्मिलित है। ॐ, ॐ, विश्व मुझमें है, दुनिया मेरी देह है। इस प्रकार, प्रत्येक ग्रास के साथ वे आध्यात्मिक बल प्राप्त करते हैं। आध्यात्मिक और शारीरिक भोजन साथ २ होता है। सारी दुनिया मैं हूँ. मेरा ही मांस और रुधिर है। भोजन सम्पूर्ण संसार का, जो मेरा अपना ही मांस और रक्त है, एक प्रतिनिधि है। सब एकता है। हिन्दुओं का इस से घनिष्ट परिचय होने के कारण, ये सब विचार उनके चित्तों और भावनाओं में एकत्रित हो जाते हैं, भावुक प्रकृति (emotional nature) और संकल्प शक्ति (will power) की यहां तक पुष्टि होती है कि तुरन्त

आत्मानुभव होता है, और वही आहार क्रिया जो पाशविक क्रिया कही जाती है आत्मानुभव की क्रिया हो जाती है।

स्नान करते समय आप को सोहम् वा ॐ जपना चाहिये, जिस का अर्थ जल है। जल ठास पृथिवी का समुद्र है। विवस्त्र शरीर पानी से एक होता है, शरीर का प्रत्येक रोम-कूप उस जल को ग्रहण कर रहा है और हम प्रकृति से एक होते हैं, मीन (जल जन्तु) से अभिन्न होते हैं, विश्व के जल से अपने बन्धुत्व का हमें पुनर्लाभ हो जाता है। जिस प्रकार से जल मट्टी और मैल को देह से हटा रहा है उसी तरह आत्मा की धूल भी छूट रही है। सम्पूर्ण विश्व मेरा भोजन है, मैं पवन भक्षण कर रहा हूँ। इसी तरह जीवन की प्रत्येक क्रिया और प्रत्येक कृत्य को, वेदान्त के अनुसार, धार्मिक कार्य बनाया जा सकता है। रोग तक देवता बनाये जाते हैं।

भारत में जब किसी घर में चेचक आती है तब वे कदापि नहीं विकल होते, कदापि कोई चिकित्सा नहीं करते, बल्कि खुश होते हैं। क्या यह अद्भुत नहीं है? वे अनेक प्रकार से गाते बजाते हैं, अवसर को अत्यन्त धार्मिक समझते हैं। घरका हरेक और सब परमात्मदेव की पूजा करते हैं। उन्हें शोक या चिन्ताकुल इच्छाएँ नहीं होतीं। जब बच्चा चंगा हो जाता है, वे धन-दान द्वारा और ढोल पीट कर देवता का पूजनोत्सव करते हैं, और बहुत हर्ष तथा आनन्द प्रकट करते हैं, दिव्य विश्व के प्रति प्रेम और कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इन दिनों इन रीतियों ने जनता के लिये अपनी महत्ता खो दी है। लोग चाहे इन बातों को समझें या न समझें, राम इन का अर्थ जानता है और इन सब का

सर्वोत्तम उपयोग करता है।

राम आप में से हरेक से एक बात की सिफारिश करता है। सबेरे जब आप उठते हैं या चलते हैं अथवा कोई और काम करते हैं, तब अपने विचार सदा निजधाम में रखिये। सदा अपने आप को केन्द्र में रखिये। केन्द्रच्युत मत हूजिये। जिस तरह मछलियां जल राशि में रहती हैं, जिस तरह चिड़ियां वायु-राशि में रहती हैं, उसी तरह प्रकाश-निधि में तुम रहो। प्रकाश में तुम रहो, चलो, फिरो, और अपना अस्तित्व रक्खो। जब अँधेरा होता है, तब भी विज्ञान के अनुसार प्रकाश ही होता है। आन्तरिक प्रकाश सदा मौजूद है। गाढ़ निद्रा-अवस्था में प्रकाश उपस्थित है। एकाग्रता की सहायता में आत्मानुभव के उच्चतम शिखर पर चढ़ने निमित्त, नौसिखुओं के लिये यह अत्यन्त आवश्यक पाया गया है कि वे अपनी सत्ता को प्रकाश का संसर्गी मानें।

भौतिक वस्तु के रूप में हम प्रकाश की पूजा नहीं करते हैं, जैसा कि रोमन कैथोलिक ईसाई अपनी मूर्तियों के साथ करते हैं। आत्मानुभव के अत्यन्त निश्चित उपाय के तौर पर, हिन्दू धर्मग्रन्थों में यह बार बार उपदेश दिया गया है कि अपने आप को निरन्तर संसार का प्रकाश समझते हुए पूजा को आरम्भ करना चाहिये। जब आप ॐ जप रहे हों तब अनुभव कीजिये कि आप प्रकाश हैं, तेज हैं। प्रकाश आप हैं। यह भाव जो हिन्दू शास्त्रों में बड़े विज्ञान के साथ प्रकट किया गया था, इस की ठेस (ठोकर) सब महात्माओं को लगी थी। ईसा ने कहा, "मैं संसार का प्रकाश हूँ।" मोहम्मद और सब महान पुरुष इसी प्रकारसे बोले थे। प्रकाश

के रूप में आप सब वस्तुओं में व्याप्त हैं। इन विचारों को निरन्तर आप को अपने सामने रखना चाहिये और इस प्रकार से आप सदा परमेश्वर के संस्पर्श में होते हैं। इस प्रकार से हिन्दू का हरेक कृत्य धार्मिक स्थिति-विन्दु से आत्मा से एक स्वर (अभेद) हुए होता है।

राज़ी से या बे राज़ी, प्रकृति की सब शक्तियां मनुष्य को आत्मानुभव कराने में बाध्य हैं। अनुकूल तथा प्रतिकूल परिस्थितियों से कोई भेद नहीं पड़ना। जैसे चलने में हम एक पैर उठाते हैं और तब दूसरा नीचे उतारते हैं, उसी तरह सुख और पीड़ा निरन्तर परस्परानुगामी हैं, और सम्पूर्ण विश्व भर में यह प्रक्रिया काम कर रही है। वे लोग सचमुच सुखी हैं जो सांसारिक सुखों और दुखों से अपने को परे रखते हैं। उन दोनों से बचना चाहिये, और इसी में सच्चा सुख है। एक का उतना ही स्वागत है जितना दूसरे का। सांसारिक सुख और दुख उसे विभिन्न नहीं प्रतीत होते, जो मनुष्य उन से ऊपर उठता है उस को एक उतना ही मान्य है जितना कि दूसरा। प्रत्येक सुख के गर्भ में दुख उपस्थित है, और प्रत्येक पीड़ा के गर्भ में सुख मौजूद है। जो सुखों को ग्रहण करता है, उसे दुख भी लेने ज़रूरी हो जाते हैं। वे अलग नहीं किये जा सकते। सच्चे आनन्द का मार्ग उन (सुख दुख) से ऊपर उठना है। सर्वदा अपने आत्मा का भोग करो। वही मनुष्य स्वतंत्र है जो सुखों और दुखों का सम भाव से उपयोग कर सकता है। सदा सत्यात्मा में रहो, फिर तुम्हारे आनन्द में कोई बाधा नहीं डाल सकता। जो स्वतंत्र है उस की अभ्यर्थना सारी प्रकृति करती है, सम्पूर्ण विश्व उस के सामने शीश झुकाता है।

मैं वह हूँ, आप स्वतंत्र हैं। आज यह आप को आदरणीय हो या न हो, फिर भी यह कठोर वास्तविकता बनी रहती है, और देर या सबेर सब को इस की उपलब्धि करनी होगी। सोहम और ओं का जप आप को केवल सत्य में रखने के लिये है। सब से बड़ा पतन है कारणकता (हेतु) के प्रदेश में उतार लिया जाना। संसार के दृश्य के कारणों (हेतुओं) पर ज्यों ही कोई सोचना आरम्भ करता है, त्योंही वह गिरता है। एक बच्चा कारणत्व (हेतु) से परे है, वह हरेक वस्तु का उपयोग करता है और कारण की परवाह नहीं करता। अतः वह प्रफुल्लित और सुखी है। वह कारणत्व, हेतुता के प्रदेश से ऊपर है। कारणत्व के प्रदेश में गिरने के बदले आपको परमेश्वरता में चढ़ना चाहिये। मैं केवल दृश्य का साक्षी हूँ, कदापि उन (रूपों वा रूप) में फँसा नहीं हूँ, सदा उन से ऊपर हूँ। ये सब नाम रूप व्यापार सुस्वर स्पन्दन मात्र हैं, चक्र की ऊपरी और नीची गति हैं, कदम का ऊपर उठना और नीचे आना है। उद्देश्य है आप को कारणत्व से ऊपर उठाने का, न कि नीचे लाने का। हेतुता के मण्डल से ऊपर उठने के लिये आप को निरन्तर प्रयत्न और संघर्ष करना पड़ेगा। अपने परमेश्वरत्व में रहो और तुम स्वाधीन हो, आप ही अपने स्वामी हो। विश्व के विधाता हो।

ओं ! ओं !! ओं !!!

आत्मानुभव की सहायता नं० १।

या

प्राणायाम।

८. मार्च १९०३ को दिया हुआ व्याख्यान।

आज राम का प्रवचन कुछ बातों पर होगा जिन से उन लोगों को बड़ी सहायता मिलेगी जिन्हों ने राम के पिछले व्याख्यान सुने हैं। पहले हम प्राणायाम को लेंगे। प्राणायाम का शाब्दिक अर्थ श्वास (प्राण) का नियंत्रण' है। योग पर हिन्दुओं की पुस्तकों में प्राण के नियमन की आठ मुख्य विधियां दी हुई हैं। किन्तु 'राम' आप के सामने केवल एक विधि पेश करेगा जिसे प्राणायाम कहते हैं, और जो प्राण के नियमन की बड़ी महत्वपूर्ण विधि है। आप सवाल करेंगे कि प्राण का संयम करने से क्या लाभ है? इस के उत्तर में 'राम' केवल यह कहता है, "प्राण श्वास) के नियंत्रण की यह विधि सीखो और इसे अमल में लाओ। आप का अपना ही अभ्यास बतावेगा कि यह अत्यन्त उपयोगी है।" जब कभी तुम चकराओ, जब कभी तुम्हें विषाद जान पड़े, जब कभी तुम खिन्न हो, जब कभी तुम्हें उदासी जान पड़े, जब कभी तुम्हारा मन मलीन हो, निरुत्साही हो, तब प्राणायाम करो, जिसे 'राम' तुम्हारे सामने अब उपस्थित करने लगा है, और तुम देखोगे कि तुम्हें तुरन्त शान्ति मिल जाती है। प्राण के नियमन की इस विधि का लाभ आप को तुरन्त जान पड़ेगा। पुनः, जब कभी किसी विषय पर आप लिखना शुरू करो, जब आप कभी

किसी विषय पर विचार करना शुरू करो, और आप को जान पड़े कि आप अपने विचारों को क़ाबू में नहीं ला सकते, तब आप यह प्राणायाम करो, और इस से जो तुम को तुरन्त शक्तियां प्राप्त होंगी उस पर आप को विस्मय होगा। हरेक वस्तु क्रम में (ठीक स्थान पर) है । हरेक वस्तु अत्यन्त वांछनीय अवस्था में रखी हुई है। प्राणायाम के ये लाभ हैं:- इस से आप के बहुत से शारीरिक रोग दूर हो जाँयगे। प्राणायाम से आप पेट के दर्द से, सिर के दर्द से, दिल के दर्द से अच्छे हो सकते हैं। अब हम देखेंगे कि यह प्राणायाम क्या है। इस देश में लोग इस या उस विधि से प्राण का नियमन करने का यत्न कर रहे हैं, किन्तु 'राम' आप के सामने वह उपाय रखता है जो समय की परीक्षा में पूरा उतर चुका है, भारत में जो अति प्राचीन काल में प्रचलित था, और जिस का आज भी वहां प्रचलन है, तथा अति प्राचीन काल से लगा कर आज तक जिस किसी ने उस का अभ्यास किया है, उसी ने उसे अत्यन्त उपयोगी पाया है।

अच्छा, प्राणायाम करने के लिये आप को अत्यन्त सुख कर, सरल स्थिति में बैठना चाहिये । एक पाँव दूसरे पर चढ़ा कर बैठना बड़ा ही सुखकर आसन है, किन्तु यह आसन, पूर्वीय भारत वासो, आप को मार डालेगा। आप आराम-कुर्सी में बैठ सकते हैं । अपनी देह सीधी रक्खो, रीढ़ की हड्डी कड़ी रक्खो, सिर ऊपर, सीना बहिर्गत, नेत्र सामने रक्खो। दहने हाथ का अंगूठा दहने नथुने पर रक्खो और बाँए नथुने से धीरे धीरे भीतर श्वास खींचो। तब तक धीरे धीरे भीतर सांस खींचते रहो, जब तक तुम्हें आराम मिले। जब तक आराम से खींच सको, तब तक श्वास भीतर

खींचते रहो। श्वास भीतर खींचते समय चित्त को शून्य न होने दो। भीतर श्वास खींचते समय चित्त को एकाग्रता से इस विचार पर जमाओ कि, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ परमेश्वर भीतर खींचा जा रहा है, कि आप परमात्मा, नारायण, सम्पूर्ण संसार, सम्पूर्ण विश्व को पी रहे हैं। अच्छा, जब आप को समझ पड़े कि आप ने अपनी पूर्ण शक्ति भर हवा भीतर भर ली है; तब अंगुली से उसी बाँए नथुने को बन्द कीजिये, जिस से आप भीतर श्वास भर रहे थे; और जब आप दोनों नथुने बन्द कर दें, तब मुख से श्वास न निकलने पावे। भीतर खींची हुई सांस अपने अन्दर फेफड़ों में, पेट में, पेड़ू में रहने दो। सब छिद्र (सूराख, खाली स्थान) हवा से भरे हों, उस हवा से भरे हों, उस हवा से जो आपने भीतर खींची है। और जब श्वास से खींची हुई हवा आप के भीतर हो तब मनको शून्य न होने दीजिये, मन इस विचार में, इस सत्य में केन्द्रित (ध्यानावस्थित) रहे कि "मैं परमात्मा हूँ, मैं सर्वशक्तिमान परमेश्वर हूँ, जो विश्व की हरेक वस्तु में, हरेक अणु में, प्रत्येक परमाणु में, भिदा हुआ है, व्यापक है, परिपूर्ण है"। यह समझो। इस विचार के अनुभव की उपलब्धि में अपनी सारी शक्तियों का प्रयोग करो, अपनी परमेश्वरता को अनुभव करने में अपनी सारी शक्ति लगा दो। ज्यों ज्यों श्वास तुम्हारी देह में भरती जाय, त्यों त्यों अनुभव करो और समझो कि मैं सत्य हूं, मैं वह दैवी शक्ति हूं जो सम्पूर्ण विश्व में परिपूर्ण है।" यह समझो। आवश्यकता है कि आप अपने मन इस पर एकाग्र करें। जब आप को समझ पड़े कि अब आप सांस एक क्षण भी और नहीं रोक सकते, तब बांया नथुना बन्द रख कर

दहना नथुना खोल दीजिये, और दहने नथुने से धीरे धीरे क्रमशः सांस बाहर निकालिये। तब भी मन को सुस्त न होने दीजिये, वह काम में लगा रहे, उसे अनुभव करने दो कि ज्यों ज्यों सांस आ रही है, और पेट की सब मलिनता दूर हो रही है, त्यों त्यों सारी मलिनता, अशुद्धता, सारी गंदगी, सारी दुष्टता, दुर्गन्धता, सम्पूर्ण अविद्या बाहर निकल रही है, दूर की जारही है, और त्यागी जारही है। सारी दुर्बलता कूच कर गई, न कोई दुर्बलता है, न अविद्या है, न भय है, न चिन्ता, न व्यथा, न परेशानी, न क्लेश हैं, सब का अन्त हो गया, सब चले गये, आप को छोड़ गये। जब आप सांस बाहर निकाल चुको, आराम से जितनी सांस बाहर निकाल सकते हो; उतनी जब आप निकाल चुको, तब तक सांस बाहर निकालते रहो,; जब तक तुम आराम से निकाल सकते हो, और जब तुम्हें समझ पड़े कि अब और सांस बाहर नहीं निकाली जा सकती, तब दोनों नथुनों को खुले रखते हुए यत्न करो कि तनिक भी हवा भीतर न जाने पावे। हाथ नाक से हटा लो. कुछ देर तक हवा को भीतर न जाने दो, जितनी देर तक तुमसे ऐसा हो सके उतनी देर तक, और जब तुम्हारे प्रयत्न से हवा नथुनों के द्वारा फेफड़ों में न जाने पाती हो, तब मन को फिर काम में लगाओ और उसे यह भान करने दो, अपने पूरे बल और शक्ति से उसे यह अनुभव करने की चेष्टा करने दो, कि यह परमेश्वरता अनन्त है। सम्पूर्ण समय (काल) और स्थान (देश) मेरा अपना विचार हैं; मेरा सत्य आत्मा, निज स्वरूप, समय, स्थान और कारणत्व (काल, वस्तु और देश) से परे है। अनुभव करो कि यह परमेश्वरत्व देश काल वस्तु से परे है, इस दुनिया की किसी भी

वस्तु से परिमित नहीं है। वह कल्पनातीत है, विचारातीत है, इन सब से परे है, प्रत्येक वस्तु से परे है, अपरिमित है, हरेक वस्तु इस में समाई है, हरेक वस्तु इससे परिमित है, आत्मा या निज स्वरूप सीमाबद्ध नहीं हो सकता। यह अनुभव करो।

इस प्रकार आप ध्यान दें कि इस प्राणायाम में, जितना कुछ अब तक आप के सामने रक्खा गया है चार प्रक्रियाएँ हैं—मानसिक और शारीरिक दोनों। पहली प्रक्रिया भीतर सांस खींचने की थी। भीतर सांस खींचने का अंश शारीरिक क्रिया थी। और यह विचार, विधि, या अनुभव करना और समझना कि परमेश्वरता मैं हूँ, मैं परमेश्वर हूँ, तथा उस परमेश्वता को अनुभव करने में मन को लगाना, एवं शक्ति को प्रयत्नशील करना, यह विचार तत्संबंधी मानसिक प्रक्रिया थी। फिर जब तक सांस तुमने अपने फफड़ों में रोक रक्खी, तब तक दो क्रियाएँ होती रहीं, एक तो सांस को फफड़ों में रखने की शारीरिक क्रिया और अपने आप को सम्पूर्ण विश्व समझने की मानसिक प्रक्रिया। और तीसरी प्रक्रिया में आप ने दहने नथुने से सांस बाहर निकाली, और सारी दुर्बलता दूर कर दी; अपने को परमेश्वरता में स्थापित रखने, आसीन रखने, जमे रहने की, कभी कोई दुर्बलता पास न फटकने देने की, या कोई आसुरी प्रलोभन अपने निकट न आने देने की दृढ़ प्रतिज्ञा की और तदनन्तर चौथी प्रक्रिया सांस को बाहर रखने की थी। इस प्रकार प्राणायाम का प्रथमार्द्ध अब तक इस चौथी प्रक्रिया में होगया। आधा (प्राणयाम) समाप्त होगया। यह चौथी

क्रिया कर चुकने के बाद आप कुछ विश्राम ले सकते हैं। तब सांस को यथेच्छ अपने नथुनों में भरने दीजिये। उसी तरह जल्दी २ सांस भीतर ले जाइये और बाहर निकालिये जैसा कि दूर तक चलने के बाद होता है। सांस का यह स्वाभाविक भीतर जाना और बाहर निकलना, जो बहुत शीघ्रता से होता रहता है, स्वतः प्राणायाम है। वह प्राकृतिक प्राणायाम है। इस प्रकार विश्राम लेने के बाद, कुछ देर तक अपने फफड़ें। को भीतर सांस लेने और बाहर निकाल देने के बाद पुनः प्रारम्भ करो। अब शुरू करो; बायें से नहीं बल्कि दहने नथुने से। मानसिक क्रिया पूर्ववत। केवल नथुनों में अदला बदल हो गया। दहने नथुने से सांस भीतर खींचो और ऐसा करते समय समझो कि मैं परमेश्वर को सांस में भीतर खींच रहा हूँ. यथाशक्ति सांस भीतर खींच चुकने के बाद जब तक आराम से होसके तब तक सांस अपने भीतर रखिये। और फिर जब सांस आप के भीतर है, अनुभव कीजिये कि आप सम्पूर्ण विश्व का जीवन और श्वास हैं, आप विशाल विश्व को परिपूर्ण और संजीवित करते हैं। इसके बाद बायें नथुने से सांस बाहर निकालिये। उस नथुने से सांस बाहर निकालिये जिससे आप ने प्राणायाम के पूर्वार्द्ध में सांस भीतर खींची थी, और समझिये कि आप सारी दुर्बलता, सम्पूर्ण अन्धकार अपने चित्त से निकाल बाहर कर रहे हैं, जैसे सूर्य कोरहे, धुंध, शीत, और अन्धकारको मार भगाता है। न फिर कोहरा, न धुंध, न अन्धकार और न सर्दी रहती है। तब सांस को अपनी नाक से बाहर रखिये तथा हरेक क्रिया को बढ़ाने और दीर्घ करने का यत्न कीजिये सब मिला कर इसमें आठ क्रियायें हैं। पहली चार क्रियाओं से आधा प्राणायाम होता है, और

दूसरी चार से प्राणायाम का उत्तरार्द्ध बनता है। इन सब क्रियाओंको यथासाध्य बढ़ाइये और दीर्घकालव्यापी बनाइये इस में एक ताल गति है। जिस तरह लटकन (पेंडुलम, pendulum) दो तरफा झूलता है, उसी तरह इस (प्राणायाम) में आप को अपनी श्वास को लटकन बनाना होता है। तालबद्ध चाल चलाना होता है। आप तब अपने ही अनुभव से देखेंगे कि आप को बड़े बल की प्राप्ति होती है। आप के अधिकांश रोग आपको छोड़ देते हैं। यदमा, पेट के विकार, खून की बीमारियाँ और प्रायः हरेक रोग आप को छोड़ देगा यदि आप प्राणायाम का अभ्यास करेंगे।

अस्तु, राम देखता है कि जब लोग प्राणायाम का अभ्यास शुरू करते हैं तब अधिकांश उनमें से बीमार पड़ जाते हैं। कारण यह है कि वे स्वाभाविक विधि का नहीं ग्रहण करते। वे इतने सैकिंडों तक सांस भीतर खींचते और बाहर निकालते हैं कि जिस से आप बीमार अवश्य पड़ जायँगे। इस श्वास-क्रिया के हरेक भाग में आप स्वाभाविक बनिये। हरेक क्रिया को बढ़ाने का प्रयत्न कीजिये, भरसक यत्न कीजिये, किन्तु अपने को थका न डालिये। अधिक काम न कीजिये। यदि केवल पहली दो क्रियाएँ (अर्थात् भीतर सांस खींचना और फेफड़ों में उसे रखना) करने के बाद आप को थकन ज्ञात पड़े, तो रुक जाइये। रुक जाइये क्योंकि आप किसी के बंधे नहीं हैं। दूसरे दिन अधिक विचार से काम कीजिये और पहली या दूसरी क्रिया करते समय अपनी शक्तियों को बचा रखिये ताकि बाकी क्रियाओं को भी आप कर सकें, विवेकी बनिये।

अस्तु, श्वास के नियंत्रण की यही एक अनुकूल विधि

है। यह हर प्रकार का शारीरिक व्यायाम है। जो लोग समझते हैं कि इस प्राणायाम में कोई गूढ़ रहस्य है, इसमें कोई दैवी अभिप्राय है, वे गलती पर हैं। जो समझते हैं कि अत्यन्त ऊँचे दर्जे का आत्मानुभव इससे प्रतिफलित होता है और इससे बढ़ कर कुछ भी नहीं है, वे गलती पर हैं। प्राणायाम या श्वास के इस नियंत्रण में कोई अलौकिकता नहीं है। यह एक साधारण व्यायाम है। जिस तरह बाहर जाकर शारीरिक व्यायाम करतेहैं उसी तरह यह एक प्रकार की फेफड़ों की कसरत है। इसमें कोई वास्तविक महिमा नहीं है, इसमें कोई गुप्त भेद नहीं है।

प्राणायाम के संबंध में एक बात और कही जानी चाहिये, जब आप सांस भीतर खींचना या बाहर निकालना शुरू करें, तब अपने पेडू (इस शब्द के व्यवहार के लिये राम को क्षमा कीजिये) को, शरीर के अधो भाग को, भीतरी ओर खिंचा रखिये। इससे आप का बड़ा हित होगा। पुनः जब आप सांस भीतर खींचे या बाहर निकालें, तब श्वास को अपने सम्पूर्ण उदर में पहुँचने और भरने दीजिये। ऐसा न हो कि सांस केवल हृदय तक जाय और हृदय से आगे न जाने पाये। सांसको नीचे और गहरा उतरने दीजिये। अपने शरीर की प्रत्येक गुफा (ख़ाली स्थान), अपने शरीर का सब ऊपरी आधा भाग परिपूर्ण हो जाने दीजिये। अस्तु, प्राणायाम के संबंध में इतना यथेष्ट है और वेदान्त की रीति पर जो लोग अपने मनों को एकाग्र करना चाहते हैं वे ॐ का उच्चारण (जाप) शुरू करने के पूर्व वेदान्तिक साहित्य में पढ़ी हुई किसी विधि पर मन की एकाग्रता आरम्भ करने के पूर्व, प्राणायाम करना अत्यन्त उपयोगी पावेंगे।

अब राम चित को एकाग्र करने की एक विधि आप के सामने रक्खेगा। इस कागज़ (प्रबन्ध) को अभी पढ़ना शुरू करने की आप को कोई ज़रूरत नहीं है। राम आप को बतावेगा कि इसे कैसे पढ़िये। भला आप जानते हैं कि यह उनके लिये हैं जो राम के व्याख्यानों में आते रहे हैं। जिन्हों ने व्याख्यान नहीं सुने हैं उनके लिये यह रोचक न होगा, उन्हें इसमें कोई अच्छाई नहीं मिलेगी, तथापि शायद इस के पढ़ने की विधि से उनका कुछ हित होगा। वे उस विधि को अपनी निजी प्रार्थनाओं में प्रयुक्त कर सकते हैं। इस कागज़ को अपने साथ लेजाने की भी उन्हें ज़रूरत नहीं है। वे विधि को सीख लें और अपनी निजी प्रार्थनाओं में उसका प्रयोग करें। यदि आप समझते हैं कि ये टाइप किये हुए कागज़ किसी काम के हैं, तो आप इन्हें, आप में से कोई भी अपने व्यवहार के लिये छपवा सकते हैं। प्रार्थना का यह एक रूप है। यह इस अर्थ में प्रार्थना नहीं है कि इसमें परमेश्वर से कोई वस्तु मांगी, चाही या याचना की गई है। यह इस अर्थ में प्रार्थना है कि आप को अपनी परमेश्वरता अनुभव करने के योग्य बनाती है। आप में से अधिकांश के पास "आत्मानुभव" पर रामकृत वह लाल किताब है। अच्छा, यह प्रबन्ध भी उसी किताब के ढंग का है। यह कागज, अर्थात सोहम् शीर्षक लेख, जो इस व्याख्यान के अन्त में दिया हुआ है, आप हर समय अपनी जेबों में रख सकते हैं, और जब कभी आप को समझ पड़े कि आप की स्थिति की दशा आप के लिये बहुत अधिक (विपरीत) है, जब कभी आप को जान पड़े कि चिन्ताओं का, परेशानियों का, नित्य के जीवन के फिक्रों का बोझ आप को दबाये देता है, तब इस कागज को लेकर एकान्त

में बैठ जाइयें, और इसे उस प्रकार से पढ़ना शुरू कीजिये जिस प्रकार से राम आज पढ़ेगा।

आराम से बैठ जाइये। उसी तरह पर बैठिये जिस तरह पर आप से प्राणायाम करने के लिये बैठने को बताया था। आप चाहे तो अपने नेत्र बन्द करलें, और प्रार्थनात्मक वृत्ति में प्रारम्भ करें, अथवा अपनी आँखें आधी बन्द रक्खें, जैसा आप को भावे।

"बस, केवल एक तत्व है. ॐ! ॐ!? ॐ!!!" इसे पढ़ो और कागज़ को अलग रखदो, उसे वहाँ रक्खा रहने दो। "बस कवल एक तत्व है।" आप यह जानते हैं, यही सत्य है। कम से कम वे सब, जिन्हों ने राम के व्याख्यानों में जी लगाया है, जानते हैं कि यह सत्य है, और जब आप को विश्वास हो जाय कि यह सत्य है,तब इसे अनुभव कीजिये। "बस केवल एक तत्य है", भाव पूर्ण भाषा में यह कहिये, अपने समग्र हृदय से इसे कहिये, इस कल्पना में घुल जाइये। बस,केवल एक सत्य है, ॐ! ॐ!! ॐ!!! अब देखिये, यह पद "बस कवल एक सत्य है" लिखने के बाद इसके सामने लिखा हुआ है ॐ! ॐ!! ॐ!!! इससे क्या सूचित होता है? इससे सूचित होता है कि आपका दिल भर जाने के बाद, "केवल एक सत्य है" के विचार में आपका मन डूब जाने के बाद, ये सब शब्द, एक, दो, तीन, चार, पाँच पढ़ने के बदले केवल एक शब्द ॐ आप कहें,क्योंकि यह एक शब्द आप के लिये सम्पूर्ण कल्पना को प्रतिपादन करता है। जैसे कि बीजगणित में हम बड़े भागों (अंशों) को य अथवा र, क अथवा ख, या किसी और अक्षर से दिखाते हैं, उसी तरह जब तुम यह विचार 'बस केवल एक सत्य है, पढ़

चुके, तब यह नाम ॐ, जो पवित्रों का पवित्र है, यह नाम ॐ जिसमें परमेश्वरता या परमात्माकी परम शक्तियाँ हैं, उच्चारणा चाहिये, और उसे उच्चारते समय केवल एक सत्य की कल्पना को आप अनुभव करें। जब आप के ओंठ ॐ उच्चारते हों, तब आप के सम्पूर्ण अन्तः करण को 'केवल एक सत्य है' की कल्पना का अनुभव करना चाहिये। किन्तु अभी तो आप को ये शब्द 'बस केवल एक सत्य है' सम्भवतः गलबलाहट मात्र हों। वे आपके लिये निरर्थक हैं। यदि आप ने राम के व्याख्यान सुने हैं, तो आप को जानना ज़रूरी है कि 'केवल एक सत्य है'। इसका एक मोटा अर्थ आपके लिये होना चाहिये। इसका अर्थ है कि यह सम्पूर्ण दृश्य(विश्व जो हमारे उत्साह को ठंडा करदेता है और हमारी प्रसन्नताको नष्ट कर देता है, यह सम्पूर्ण भेद-मय दृश्य जगत सत्य नहीं है, सत्य केवल एक है, सारी परिस्थितियां सत्य नहीं हैं। यह अर्थ है। सत्य केवल एक है, और ये हैरान करने वाली परिस्थितियां सत्य नहीं हैं। जिन्हों ने इस प्रयोग की परीक्षा नहीं की है, और अपनी शक्तियों को भय-भ्रांत कर दिया है, केवल वे ही इस एक सत्य के अस्तित्व को अस्वीकार कर सकते है। यह मामला भी उतना ही प्रयोग करने का है जितना कि किसी प्रयोग शाला में किया हुआ कोई भी प्रयोग। यह दृढ़ कठोर तथ्य है। जब तुम अपने चित्त को गला देते हो, जब तुम अपने क्षुद्र मिथ्या अहंकार को परमेश्वरता में विलीन कर देते हो, तब क्या परिणाम होता है ? परिणाम यह होता है (नज़ारथ के ईसा के इन शब्दों पर ध्यान दीजिये) कि यदि सरसों के बीज भर भी विश्वास आप में हो और पहाड़ को आने का आदेश आप दें, तो पहाड़ आ जावेगा। उस सत्यमें आप जियें (जीवनमें

बतें), उस सत्य को अनुभव करें, और आप देखेंगे कि आप की सब परिस्थितियां, आप के सब समुपस्थित संकट, सब क्लेश और चिन्ताएँ जो आप के सिर पर सवार हैं, गायब हो जाने को लाचार हैं। परमेश्वरता की अपेक्षा बाहरी व्यापार में आप अधिक विश्वाश रखते हैं, आप दुनिया को परमेश्वर से अधिक वास्तविक (सत्य) बना देते हैं। बाहरी व्यापार के संबंध में आपने मोहवश अपने को एक जड़ता में परिणत कर लिया है, और यही बात है कि आप अपने को सब तरह की बीमारियों और क्लेशों में फंसाते हैं। जब आप का चित्त बहुत गिरा हुआ हो, तब इस कागज़ को उठा लीजिये और अनुभव कीजिये कि 'बस केवल एक सत्य है'. देखिये कि यह एक कथन उन सब नाम मात्र सत्यों से उच्चतर कथन है, जो संबंधियों के द्वारा आप में धीरे २ भर दिये गये हैं। सब नाम मात्र तथ्य जिनको आप तथ्य मानते रहे हैं माया मात्र वा भ्रम मात्र हैं, इन्द्रियों के इन्द्रजाल ने आप के लिये इन को बना रक्खे हैं। इन्द्रियों के चकमें में न आओ। एक व्यक्ति आता है और आप में दोष निकाल कर आप की आलोचना करता है, दूसरा आता और आपको गालियां देता है, तीसरा आता और आप की खुशामद करता तथा आप को अति स्तुति करके फुला देता है। ये सब तथ्य नहीं हैं, ये सब सत्य नहीं हैं। असली तत्व, कठोर तथ्य तो आप को अनुभव करना चाहिये। इसे जपते समय उस सारे विश्वास को आप उड़ा दीजिये व निकाल दीजिये कि जो आप ने बाहरी दृश्य रूप परिस्थितयों में बना रक्खा है। अपनी सब शक्तियाँ और बल इस तथ्य में लगाओ, 'बस केवल एक सत्य है'। ॐ! ॐ!! ॐ!!!। अच्छा, प्रायः आप देखेंगे कि 'केवल एक सत्य है' के विचार का

प्रथम पाठ आप को प्रसन्न और प्रफुल्लित कर देगा, आप को सब कठिनाई और व्यथा से मुक्त कर देगा। किन्तु यदि आप की और आगे पढ़ने की प्रवृति हो तो आप पढ़ सकते हैं, अन्यथा यदि आप अपनी जेब के उस कागज का एक ही वाक्य अमल में लासकें तो यथेष्ट है। यदि आप समझें कि आप को कुछ और बल की आवश्यकता है, तो आप दूसरा वाक्य पढ़िये, "वह सत्य मैं स्वयं हूँ।" अब वह घर के निकट आ रहा है। अरे, मेरा पड़ोसी मुझ से भिन्न नहीं है, मैं वहां भी मौजूद हूँ। वह तत्व मैं खुद हूँ। ॐ !! ॐ ॐ !!! ध्यान करो, कुछ लोग कहते हैं कि जब आप ॐ उच्चार रहे हों,या यह कर रहे हों, तब अपने हाथ आप बन्द रक्खें। किसी तरह का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। इस विचार को अनुभव करो। मन को एकाग्र करते समय यह जरूरत नहीं है कि आप अपने को किसी विशेष आसन में रक्खें। कोई बंधन नहीं है। अनुभव करते,महसूस करते और विचार को भीतर घसाने तथा अन्दर सांस के साथ खींचने की चेष्टा करते समय शरीर की परवाह न कीजिये। 'लोग क्या कहेंगे', इस की चिन्ता न कीजिये। यदि आप की गाने की प्रवृत्ति हो तो गाते रहिये। यदि आप की लेट रहने की प्रवृत्ति हो तो फर्श पर पड़े रहिये। भाव का अनुभव कीजिये यदि आप के हाथ उस ओर चलते हैं तो उन्हें चलने दीजिये। शरीर के संबंध में कोई प्रतिबंध नहीं है, केवल भाव का अनुभव कीजिये। 'सर्वशक्तिमान' का भाव आता है, उस पर मनन कीजिये। यह कागज़ उनके लिये हैं जिन्हों ने व्याख्यान सुने हैं। जिन्हों ने नहीं सुने हैं वे अवश्य ही इसे रोचक न पावेंगे। जिन्हों ने व्याख्यान सुने हैं वे जानेंगे

कि वास्तविक आत्मा सर्व शक्ति रूप है, परम स्वरूप, सर्वशक्तिमान है। इस संबंध में, इस संसार में हरेक बात आत्मा से की जा रही है, जैसे कि इस पृथिवी पर हरेक बात सूर्य के द्वारा हो रही है। हवा सूर्य के कारण चलती है, घास सूर्य के कारण उगती है, नदी सूर्य द्वारा बहती है, लोग सूर्य के कारण जाग पड़ते हैं, गुलाब सूर्य के कारण खिलते हैं। इसी तरह, आत्मा ही के कारण, सर्वशक्तिमान परम स्वरूपके ही कारण विश्व में प्रत्येक व्यापार हो रहा है। सर्वशक्तिमान, सर्वशक्तिमान ॐ ! ॐ !! ॐ !!! इस तरह उन सब सन्देहों को, जो आपको दुर्बल बनाते और पराजित करते हैं, उन सब भ्रान्तियों को, जो आप को कायर बनाती हैं, आप के सामने घुस आने का कोई अधिकार नहीं है। अनुभव कीजिये कि आप सर्वशक्तिमान हैं। जैसा आप ख्याल करते हैं वैसे ही आप हो जाते हैं। अपने आप को पापी कहिये और आप पापी हो जाते हैं, अपने आप को मूर्ख कहिये और आप मूर्ख हो जाते हैं, अपने आप को दुर्बल कहिये फिर इस दुनिया की कोई शक्ति आप को प्रबल नहीं बना सकती है। अनुभव कीजिये कि सर्वशक्ति और सर्वशक्तिमान आप हैं।

तब 'सर्वज्ञ' का भाव आता है। इस (सर्वज्ञता के) भाव को आप ग्रहण करें, मन को इस भाव पर मनन करने दीजिये, ॐ का गान करने दीजिये। ॐ शब्द सर्वज्ञ का स्थानीय है, और ॐ उच्चारिये। शब्द या सूत्र जो उच्चारा जाना चाहिये वह ॐ है। सर्वज्ञ, ॐ, ॐ। इस तरह चलो और उन गलत विचारों को जो आप को मुग्ध करके जाहिल मूर्ख बनाये हुए हैं, दूर कर दो। परमेश्वरता

का सब से सीधा रास्ता यही है ।

ऐसा ही भाव 'सर्वव्यापी' का लीजिये । अनुभव करो कि "मैं परिछिन्न नहीं हूँ, यह क्षुद्र शरीर नहीं हूँ, मैं यह परिच्छिन्नात्मा नहीं हूँ; यह जीव, यह 'अहं' मैं नहीं हूँ । हरेक अणु और परमाणु में जो व्याप्त और भिदा हुआ है वह मैं स्वयं हूँ ।" इस संबंध में तनिक भी सन्देह चित्त में न लाओ । सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापी, सर्वज्ञ, वह मैं हूँ, वह हरेक चीज़ में व्याप्त है, सब शरीर मेरे हैं । ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

अच्छा, बाक़ी वाक्यों पर अधिक टिकने वा ठहरने की राम को ज़रूरत नहीं है । वे केवल आप को पढ़ कर सुना दिये जांयगे । इस विधि का अभ्यास करो और यदि एक ही सप्ताह में आप को परमेश्वरता का अनुभव न हो, तो राम को गलत समझियेगा ।

"पूर्ण स्वास्थ्य स्वरूप मैं हूँ ।"

यदि वह शरीर, जिसे आप मेरा कहते हैं, बीमार है तो उसे अलग कर दीजिये, उसका खयाल न कीजिये, समझिये कि आप पूर्ण स्वास्थ्य स्वरूप हैं, पूर्ण स्वास्थ्य आप का है । यह अनुभव करो । शरीर तुरन्त अपने आप ही स्वस्थ हो जायगा । यह है रहस्य । यत्न वा अभ्यास करने से तुम देखोगे कि यह तथ्य है या नहीं । तुम्हारी परवाह के बिना भी शरीर ठीक हो जायगा । तुम्हें इस शरीर के लिये नहीं फिक्र करना चाहिये कि "ऐ परमेश्वर, मुझे अच्छा कर दे ।" संस्कृत धर्म-ग्रन्थों में एक सुन्दर वाक्य (मंत्र) है "नायमात्मा बल-हीनेन लभ्य ।" दुर्बल इस सत्य को नहीं पा सकते । क्या आप नहीं देखते कि जब आप अमेरिका के राष्ट्रपति या किसी सम्राट के पास जाते हैं तब आप यदि फ़क़ीर बन

कर जाते हैं तो आप दुरदुरा दिये जाते हैं, आप उसके सामने नहीं हाज़िर होने पाते। सो जब आप फ़क़ीरी हालत में परमेश्वर के पास पहुँचोगे, तब आप धकेल कर बाहर कर दिये जाओगे। समझिये कि "मैं स्वस्थ हूँ," और कोई चीज़ न मांगिये। 'मैं तन्दरुस्त हूँ', और तन्दरुस्त आप हैं।

तदुपरान्त दूसरा विचार "सम्पूर्ण शक्ति मैं हूँ" आता है। इसे मन में रक्खो और ॐ! ॐ!! ॐ!!! उच्चारो। इस तरह कहो 'सर्व शक्ति मैं हूँ'।

तब दूसरा विचार, "सम्पूर्ण विश्व मेरा संकल्प मात्र है।" इसे मानो और इसे पढ़ते समय उन दलीलों को ध्यान में लाओ जिन्हें वेदान्त इस तथ्य को सिद्ध करने में पेश करता है। इस तथ्य को सिद्ध करने में तुम जो कुछ भी जानते हो उसे ध्यान में लाओ, और यदि आप ने ऐसी कोई भी बात पढ़ी या सुनी नहीं है जो साबित करती है कि दुनिया मेरा संकल्प है तो इस विचार पर विश्वास करो, और आप देखेंगे कि दुनिया आप की कल्पना रूप है। 'दुनिया मेरी कल्पना है,' ॐ उच्चारो और ऐसा समझो। इसी प्रकार बाक़ी सब,

सर्व आनन्द मैं हूँ।	ॐ! ॐ!! ॐ!!!
सर्व ज्ञान मैं हूँ।	,, ,, ,,
सर्व सत्य मैं हूँ।	,, ,, ,,
सर्व प्रकाश मैं हूँ।	,, ,, ,,
निडर, निर्भय मैं हूँ।	,, ,, ,,
न कोई अनुराग या विराग। मैं सब इच्छाओं की पूर्णता हूँ।	,, ,, ,,

मैं परमात्मा हूँ। ,, ,, ,,
मैं सब कानों से सुनता हूँ। ,, ,, ,,
मैं सब आंखों से देखता हूँ। ,, ,, ,,
मैं सब मनों से सोचता हूँ। ,, ,, ,,
जो सत्य मेरा स्वरूप है उसी को जानने की साधु आकांक्षा करते हैं। ,, ,, ,,
प्राण और प्रकाश जो नक्षत्रों और सूर्य के द्वारा झलकता है, वह मैं हूँ। ,, ,, ,,

अब कागज़ समाप्त हो गया।

अब इसे स्पष्ट करने के लिये कुछ शब्द कहे जा सकते हैं। हिन्दी कहानियों में एक बड़ी सुन्दर कहानी है। एक समय में एक बड़े पंडित, बड़े महात्मा थे। कुछ लोगों को वे पवित्र कथा सुना रहे थे। ऐसा हुआ कि गांवकी ग्वालिनी पंडित जी के पास से होकर निकलीं, जब कि वे पवित्र कथा बांच कर लोगोंको सुना रहे थे। इन ग्वालिनों ने पंडित जी के मुख से ये बचन सुने "पवित्र स्वरूप परमेश्वर का पवित्र नाम बड़ा जहाज़ है, जो हमें (भव-) सागर के पार लगा देता है। मानो कि सागर एक छोटा सरोवर मात्र है। बिलकुल कुछ नहीं है।" इस प्रकार का कथन उन्हों ने सुना। इन ग्वालिनों ने उस कथन को शब्दशः ग्रहण किया। उन्हों ने उस कथन में अचल विश्वास स्थापित किया। उस पार अपना दूध बेचने के लिये उन्हें नित्य नदी पार करनी पड़ती थी। वे ग्वालिनें थीं। उन्हों ने अपने मनों में सोचा। वह पवित्र वचन है, वह गलत नहीं हो सकता, अवश्य वह यथार्थ होगा। उन्हों ने कहा, "नित्य एक एकन्नी हम मल्लाह को क्यों दें? परमेश्वर का पवित्र नाम लेकर और ॐ उच्चरती हुई हम नदी

क्यों न पार करें? हम नित्य एकन्नी क्यों दें?" उन का विश्वास वज्र के संमान कठोर था। दूसरे दिन वे आई और केवल ॐ उच्चारा, मल्लाह को कुछ नहीं दिया, नदी पार करना शुरू किया, नदी उतर गई और डुबी नहीं। प्रति दिन ये नदी पार करने लगीं, मल्लाह को वे कुछ नहीं देती थीं। लगभग एक महीने के बाद उस उपदेशक के प्रति, कि जिस ने वह वाक्य पढ़े थे और उन का पैसा बचाया था, अत्यन्त कृतज्ञता का भाव उन में उदय हुआ। उन्हों ने महात्मा को अपने घर पर भोजन करने को निमन्त्रण दिया। अच्छा, निमन्त्रण स्वीकृत हुआ, नियत तिथि पर महात्मा को उन के घर पधारना पड़ा। एक ग्वालिन महात्मा को लेवाने आई। यह ग्वालिन जब महात्मा को अपने गांव लिये जाती थी, तब वे नदी पर पहुँचे। ग्वालिन एक पल में दूसरे तट पर पहुँच गई और महात्मा जी उसी पार खड़े रह गये, वे उस साथ न जा सके। कुछ देर में ग्वालिन लौट आई और महात्मा से विलम्ब का कारण पूछा। उन्हों ने कहा कि मैं मल्लाह की राह देख रहा हूँ। मल्लाह को उसे दूसरे तट पर ले जाना चाहिए। ग्वालिन ने उतर दिया, "महाराज! हम आप की बड़ी कृतज्ञ हैं। आप की कृपा से हमारे पैंतीस आने बच गये, और केवल पैंतीस ही आने नहीं किन्तु अपने आजीवन अब हमें मल्लाह को पैसा देने में कुछ न खर्च करना पड़ेगा। आप खुद भी रुपया क्यों नहीं बचाते और हमारे साथ उस पार चले चलते? आप के उपदेश और शिक्षा से हम, बिना कोई हानि उठाये, अक्षत उस पार चली जाती हैं। आप स्वयं भी उस किनारे को जा सकते हैं।" साधु ने पूछा वह कौन सी शिक्षा थी जिस से तुम लोगों का पैसा बच गया। ग्वालिन ने उस वचन की साधु को याद दिलाई

जो उन्हों ने एक बार कहे थे कि भगवान का नाम एक जहाज़ है जो हमें भवसागर के पार उतारता है । साधु ने कहा, बिलकुल ठीक है, बहुत ठीक है, मैं भी उस पर अमल करूँगा । अन्य साथी भी थे । (चले न जाओ, अब कथा का रोचक भाग आता है) । एक बड़ा लम्बा रस्सा था । उस ने वह रस्सी अपनी कमर में बांध ली, और रस्सी का बाक़ी हिस्सा साथियों से अपने पास रखने को कहा, और कहा कि परमेश्वर का नाम लेकर मैं नदी में फांदता हूँ और विश्वास पर नदी के पार जाने का साहस करूँगा, किन्तु देखना कि मैं यदि डूबा जाने लगूँ, तो मुझे घसीट लेना । महात्मा नदी में कूद पड़ा, कुछ पग आगे बढ़ने पर वह डूबने लगा । साथियों ने उसे बाहर निकाल लिया । अब तनिक ध्यान दीजिये । इस प्रकार की श्रद्धा जैसी पंडित में थी, यह श्रद्धा जैसा विश्वास उत्पन्न करती है, वह रक्षा का बीज नहीं है । तुम्हारे दिलों में यह कुटिलता है । जब आप ॐ उच्चारना शुरू करते हैं या परमेश्वर का नाम लेते हैं और कहते हैं, "मैं स्वास्थ्य हूँ, स्वास्थ्य," पर अपने हृदयों के हृदय में आप काँपते हैं, आप के हृदयों के हृदय में वह छोटा काँपता, लरजता "अगर" मौजूद रहता है कि "अगर मैं डूबने लगूँ तो मुझे बाहर निकाल लेना"—आप में वह क्षुद्र हिचकिचा "अगर" है । तुम्हारे चित्त में शैतान मौजूद है, यहां कोई आनुमानिक मामला नहीं है । यह एक तथ्य है कि सारे भेद, इस संसार की सब परिस्थितियां मेरी सृष्टि हैं, और मेरी करतूत हैं, और कोई चीज़ नहीं हैं । तुम परमेश्वर हो, प्रभुओं के प्रभु हो । इसे आप समझो । इसी क्षण इसे अनुभव करो । दृढ़, अचल विश्वास रक्खो । ज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान को प्राप्त करो । आप देखेंगे

कि इस पत्र को आज बताये गये ढंग से नित्य पढ़ने से आप को बांधने वाले सब "अगर-मगर" दूर होजाँयगे। अपनी परमेश्वरता से निरन्तर अपने आप का लगाव रखने से तुच्छ 'यदि' से छुटकारा हो जायगा। यदि पाँच बार नहीं, तो कम से कम नित्य दो दफे इस कागज़ को पढ़ो, और आप के सब क्षुद्र 'अगर' निकाल दिये जाँयगे।

राम अब व्याख्यान बन्द करता है, और आप में से जो लोग कुछ सामाजिक बातचीत राम से करना चाहते हैं वे, यह आसन छोड़ चुकने के बाद, ऐसा कर सकते हैं। यह आसन ॐ, ॐ, ॐ, उच्चारने के बाद छोड़ूँगा।

एक शब्द और। आप में से जिन लोगों ने ये व्याख्यान नहीं सुने हैं, और इस लिये उस (राम) के व्याख्यान को नहीं समझ सके हैं, वे इस सम्पूर्ण वेदान्तिक तत्वज्ञान को पुस्तक के रूप में अत्यन्त दार्शनिक ढंग से प्रकाशित पावेंगे। सम्पूर्ण वेदान्त-दर्शन आप के सामने पेश किया जायगा। तथा एक शब्द और भी। जितने संदेह वेदान्त दर्शन के संबंध में आप के मन में हैं, और आप में जितनी आशंकाएँ हैं, वही सब संदेह और संशय एक समय में स्वयं राम के रहे हैं। आप के अनुभव और आपके सन्देह स्वयं राम के संदेह हैं। राम इन रास्तों में से होकर निकल चुका है, और आप को विश्वास दिलाया जाता है कि हमारे सब सन्देह औंधा अज्ञान हैं। ये सब सन्देह क्षण स्थायी हैं, वे एक पल में उड़ सकते हैं। यदि आप में से कोई अपने सन्देहों के संबंध में राम से विशेष वार्तालाप करना चाहता है, तो वह कर सकता है।

पुनः यह कह दिया जाय कि यदि आप आपत्ति से टनाछू चाहते हैं, पूर्ण आनन्द प्राप्त करना चाहते हैं, अपनी

मुक्ति को फिर पाना चाहते हैं, आत्मानुभव को प्राप्त करना चाहते हैं, तो आप को वेदान्त का अनुभव होना चाहिये। अन्य कोई मार्ग नहीं है। आप के सब मत, आप के सब सिद्धान्त, आपके सब अनुभव, केवल वेदान्त को पहुँचाते हैं। वे केवल परम सत्य के पथ-दर्शक हैं। ये आशाजनक लक्षण हैं, बहुत अच्छे चिन्ह हैं कि हाल में अमेरिका में जिन सम्प्रदायों का श्रीगणेश हुआ है उनमें से अत्यधिक वेदान्त को सम्मिलित और ग्रहण कर रहे हैं। वे उसे (वेदान्त को) अपने में ले रहे हैं। उन्हें इस का ऋण स्वीकार करने की ज़रूरत नहीं है। ईसाई-विज्ञान, नवीन-विचार, आध्यात्मिकता या दैवी-विज्ञान, इत्यादि,—ये लोग, जो हमें ग्रहण कर रहे हैं, परमेश्वर हैं। अमेरिका के लिये ये अति आशापूर्ण चिन्ह है। किन्तु राम आप से कहता है कि यदि आप सत्य को उसके पूर्ण प्रताप और सौन्दर्य्य के साथ प्राप्त करना चाहते हैं, तो वेदान्त मौजूद है। आप इसका चाहे जो नाम रख लें, किन्तु इन हिन्दू धर्मग्रन्थों में वे (ऋषि) इसे अति सुस्पष्ट और स्वच्छ भाषामें उपस्थित करते हैं। यह सर्वश्रेष्ठ सत्य है कि तुम परमेश्वर हो, प्रभुओं के प्रभु हो। यह समझो, यह अनुभव करो, और फिर तुम्हें कोई भी हानि नहीं पहुँचा सकता, तुम्हें कोई भी चोट नहीं पहुँचा सकता. तुम प्रभुओं के प्रभु हो। दुनिया मेरा संकल्प है, मैं प्रभुओं का प्रभु हूँ। यह है सत्य। यदि आप ऐसी बातें सुनने के अभ्यासी नहीं हैं, तो खौफ न खाइये। यदि आप के जनकों का इसमें विश्वास नहीं था, तो क्या हुआ? आप के जनकों ने अपनी पूर्ण शक्ति से काम लिया, आप को अपनी पूर्ण शक्ति को काम में लाना चाहिये। आप की मुक्ति, आप के जनकों का उद्धार आप का अपना काम

है। वेदान्त को ग़ैर न समझो। नहीं, ये आप के लिये प्राकृतिक है। क्या आप की निजी आत्मा आप के लिये ग़ैर है? वेदान्त आपको केवल आपकी आत्मा और स्वरूप के संबंध में बताता है। यह तब ग़ैर हो सकता था जब आप का अपना ही आत्मा आप के लिये ग़ैर होता। सब पीड़ा-शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक—वेदान्त का अनुभव करने से तुरन्त रुक जाती हैं, और अनुभव कठिन काम नहीं है।

ॐ! ॐ!! ॐ!!!

सोहम् ।

१० जून १९०३ को दिया व्याख्यान।

एक बड़ा ही उपयोगी मंत्र है जिससे हरेक की घनिष्ठता होनी चाहिये। वह है सोहम्। अंग्रेज़ी भाषा में 'सो' का अर्थ है ऐसा, किन्तु संस्कृत भाषा में 'सो' का अर्थ है 'वह', और 'वह' का अर्थ सदा परमेश्वर या परमात्मा है। इस तरह 'सो' शब्द का अर्थ परमेश्वर है। भारत में स्त्री अपने पति का नाम कभी नहीं लेती। उसके लिये दुनिया में केवल एक पुरुष है, और वह (एक पुरुष) उसका पति है। वह (स्त्री) सदा उसे "वह" कहती है, मानो समग्र विश्व में कोई और मौजूद ही नहीं है। फलतः उसके लिये 'वह' सदा परमेश्वर है, और परमेश्वर सदा उसके विचारों में है। इसी तरह वेदान्ती के लिये 'सो' शब्द का अर्थ सदा परमेश्वर या परमात्मा है। मेरा स्वरूप केवल एक सत्य मात्र है, यह विचार निरन्तर चित्त में रहना चाहिये।

हम् (Ham) का अर्थ फारसी भाषा में 'मैं' है। एच को निकाल दो और वहां आई (*i*) को बैठा दो, और हमें सो-ऐम-आई (So- am- I) 'वह मैं हूँ' की प्राप्ति हो जाती है। परमेश्वर मैं हूँ, परमात्मा मैं हूँ, और परमेश्वर सदा मेरे द्वारा बोल रहा है, क्योंकि वही वह तो है ही। ॐ भी इसमें शामिल है। एस और एच (S and H) को निकाल दो, हमें ॐ मिलता है। सोहम् श्वास से आने वाली स्वाभाविक ध्वनि है, और (इस) शब्द की पूर्ण महिमा हर समय निर-

न्तर हमारे मनों में रहनी चाहिये। श्वास को ताके रहो और इस मंत्र सोहम् के द्वारा उसे सुरीली बनाओ। यह एक मानसिक, शारीरिक और आध्यात्मिक व्यायाम है। सांस लेने में दो क्रियाओं का समावेश है, भीतर जाना और बाहर निकलना, सांस लेना और सांस निकालना। भीतर सांस लेते समय 'सो' कहा जाता है और बाहर सांस निकालते समय 'हम' कहा जाता है। कभी कभी प्रारम्भ करने वाले को ॐ की अपेक्षा 'सोहम्' जपना (उच्चारना) बहुत सहज पड़ता है। यह दोनों को आलिंगन करता है। जब ज़ोर ज़ोर से न उच्चार रहे हो, तब इस पर विचार करो, भीतर ही भीतर और चित से इस पर मनन करो, किन्तु इस सारे समय बिलकुल स्वाभाविक रीति पर सांस लेते रहो। यह सच्चे प्रकार की आत्म-सूचना है जो मनुष्य को इन्द्रियों के सम्मोहन से हटा कर परमेश्वरता में लौटा ले जाती है। वह हूँ मैं। विश्व में हर समय तालबध गति हो रही है। संस्कृत में उस शब्द का अर्थ सूर्य भी है। सूर्य हूँ मैं। मैं प्रकाश का दाता हूँ, मैं लेता कुछ नहीं हूँ, पर देता सब हूँ। मैं दाता हूँ और लेने वाला नहीं हूँ। मान लीजिये कि हम दूसरों से बहुत ही रूखी चिठियों और डाही पुरुषों की कठोर आलोचनाओं के पाने वाले हैं। तो क्या इससे हमें रंजीदा और हैरान तथा परेशान होना चाहिये, नहीं। अपनी परमेश्वरता में क्षोभ रहित चैन से रहो। जो आप को सब से अधिक हानि पहुँचाने की कोशिश कर रहे हैं उनका कृपा पूर्ण और प्रेममय चिन्तन करो। वे तुम्हारे अपने स्वरूप हैं, और अपने निजी स्वरूप के लिये तुम केवल अच्छे विचार रख सकते हो। मैं सूर्यों का सूर्य हूँ। प्रकाश, प्रताप, शक्ति मैं हूँ। मुझे कौन हानि पहुँचाने वाला है? मेरा स्वरूप

(आत्मा) मेरे स्वरूप (आत्मा) को हानि नहीं पहुँचा सकता। असम्भव है। दूसरों की क्षुद्र मिथ्या सम्मतियों से ऊपर उठो परमेश्वर को सदा अपने द्वारा बोलने, सोचने और कार्य करने दो। अपनी परमेश्वरता में शान्ति से चैन करो। मैं सूर्य हूँ, दुनिया को प्रकाश का दाता हूँ।

पूर्ण शक्ति अनुभव करो। आप देखते हैं कि हमारी सब कठिनाइयों का कारण अहं, देश से परिमित अपने क्षुद्र अहं, की चाहना है। यही विचार है, जो हमें दुर्बल करता और मार डालता है। इस रोग को दूर करने के लिये किसी व्यक्ति या हरेक व्यक्ति को स्वभावतः एक कमरे में बैठ जाना होता है और वहां रोना या विलपना, अपनी छाती पीटना, और यह कहना होता है "निकल शैतान निकल, निकल शैतान निकल।" अपने को ऐसी हालत में लाओ कि मानो यह देह आपकी कभी पैदा ही नहीं हुई थी। तुम तो परमेश्वर हो, तुम यह (देह) नहीं हो। यदि तुम अपने आप को देश काल के अन्दर क़ैद रखते हो, तो दूसरे लोगों के विचार और दूसरे मनुष्यों की तरकीबें तुम्हें तंग करेंगी। यह देह जिसे तुम संबोधन कर रहे हैं एक व्यामोह hallucination) है। मैं परमेश्वर हूँ। क्या तुम इस पर ध्यान देते हो ? मिथ्या सम्मतियों की अपेक्षा वास्तविकता में अधिक विश्वास करो, परमेश्वरता तुम हो। बुरे विचारों और प्रलोभनों को तुम्हारी पवित्र उपस्थिति में आने का कोई हक नहीं है। क्या अधिकार है उन्हें तुम्हारी मौजूदगी में प्रकट होने का ? पवित्र पुनीत तुम हो, यह अनुभव करो। रोग फिर कहां है ? किसी से कोई आशा न करो, किसी से न डरो, अपने को कोई उत्तरदायित्व न समझो। कर्त्तव्य में बंध कर अपने

काम को न करो। कर्त्तव्य क्या है? कर्त्तव्य आपकी अपनी रचना है। श्रेष्ठ राजकुमार की भाँति अपना काम करो। हरेक चीज़ तुम्हारे लिये खेल की सी चीज़ होना चाहिये। अपने सामने का काम प्रसन्नता से, स्वच्छन्दता से करो।

रोग दो प्रकार के हैं। भारतीय भाषा में हम उन्हें आध्यात्मिक (भीतरी) रोग और आधिभौतिक (बाहरी) रोग कहते हैं। इसका शब्दार्थ है शैतानी (विकट अधिभौतिक) रोग और दैवी (काल्पनिक, आध्यात्मिक) रोग, पहलवान रोग और नारी रोग। इसका क्या अर्थ है? अरे, काल्पनिक रोग या नारी रोग वह है जो हमारे भीतर से उठता है। हमारे भीतर की इच्छाएँ, हमारी आकांक्षाएँ, हमारे अनुराग, हमारी लालसाएँ मायिक या नारी रोग हैं। और पहलवान रोग या यथार्थ रोग वह हैं जो दूसरे के कार्यों या प्रभावों से हमें होते हैं। अच्छा, किसी मनुष्य को निरोग कैसे किया जाय? लोग कहते हैं, पुरुषरोग जिसे आधिभौतिक रोग, दानव रोग, या बाहरी रोग कहते हैं, उसके संबंध में अपने आप को परेशान मत करो। जिस क्षण आप अपने आप को अपनी निर्बलकारिणी इच्छाओं से, जिस क्षण आप अपना पिंड उनसे छुटाते हैं, उसी क्षण तुरन्त बाहरी रोग आपको छोड़ देंगे। किन्तु इस दुनिया में लोग एक भूल करते हैं. वे अपने निजी काम को नहीं देखते। वे कठिनता के उस भाग पर नहीं ध्यान देते, जिस की सृष्टि उन्हीं की इच्छाओं से होती है। वे पहले बाहरी भयों से लड़ना शुरू करते हैं, अतः वे गलत जगह से शुरू करते हैं, वे पहले परिस्थितियों से लड़ना चाहते हैं व नररोग को जो रोग दूसरों के प्रभाव द्वारा आता है, हटाना चाहते हैं।

वेदान्त कहता है कि आप की इच्छायें आप की कमज़ोरियां हैं अन्य हरेक बात का निर्णय आप के लिये कर दिया जायगा। यह आप में नारी भाग है। यही बाहरी प्रभावों को आकर्षित करता है। जैसे कि एक कुत्ते के मुँह में जब मांस का एक टुकड़ा होता है, तब दूसरे कुत्ते आकर उसके लिये रार ठानते हैं। जब आप अपनी कमज़ोरी या नारीरोग से छूट जायँगे, तब नररोग आप को तुरन्त छोड़ देगा। इस नारी या मायिक रोग की प्रकृति की और व्याख्या की जानी चाहिये। यह कोई व्यक्ति है। यदि वह पूर्णतया शुद्ध है, यदि वह सब प्रलोभनों से अपने को पूर्णतया परे और अपने अन्तर्गत परमेश्वरता का अनुभव कर सकता है, तथा यह कहने को तैयार है "शैतान मेरे पीछे जा, मैं तुझ से कोई वास्ता नहीं रख सकता," तो राम उससे एक बात कहता है। उस मनुष्य को इस दुनिया में किसी भी व्यक्ति की इच्छाएँ, किसी के भी विचार, इस दुनिया के किसी भी व्यक्ति की बुराइयां या प्रलोभन कोई हानि नहीं पहुँचा सकते। कोई भी शक्ति उसे तंग या तनिक भी नीचा नहीं दिखा सकती, क्योंकि वह आप खुद आसुरी या नररोग से मुक्त हो चुका है। जिस क्षण हम अपने को दुर्बल बनाते हैं और शारीरिक भोगों की इच्छा आरम्भ करते हैं, तब क्या होता है? सब शत्रुओं के बुरे विचार इस या उस प्रलोभन का रूप धारण करते और हमें भक्षण करते हैं। यदि आप शांति और पूर्ण आनन्द भोगना चाहते हैं, यदि आप अपनी परमेश्वरता को प्राप्त करना चाहते हैं, तो नीचस्थ प्रकृति की मृत्यु अवश्य होना चाहिये। इस मृत्यु में जीवन है, इस मृत्यु में जीवन है. इस मृत्यु में जीवन है। अब यहां अपने आपको परमेश्वर समझो। भारतवर्ष जब तक आप न पहुँचें, तब तक के लिये

अपनी परमेश्वरता अनुभव करने को स्थगित न कीजिये। अपने को स्वाधीन कीजिये, और इस काम को करते समय ठंढे दिमाग से, धीर, निर्भय वृति से, काम लीजिये।

मैं कोई इच्छा नहीं करता। मुझे कोई आवश्यकता, कोई भय, कोई आशा, कोई उत्तरदायित्व नहीं है।
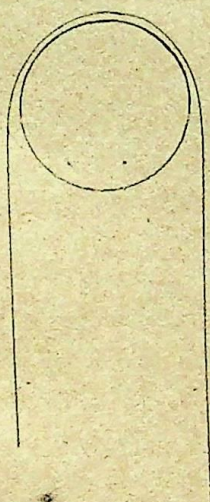
यह चक्र अ एक चरखी है, और इस चरखी पर एक बड़ा सुन्दर रेशमी तागा लटका है, और इस रेशमी तागे के सिरों में दो बाट बंधे हैं, जिसमें से एक १० सेर और दूसरा ६ सेर का है। अब इस ६ सेर के बाट (छोटे बाट) में हम दूसरा ४ सेर का बाट जोड़ते हैं। ६ सेर में चार सेर जोड़ने से दस होते हैं। सो अब एक तरफ दस सेर और दूसरी ओर भी दस सेर हो गये। दोनों पल्ले बराबर। वे

बिलकुल नहीं डिगेंगे। अच्छा, अब मान लीजिये कि हम ने चार सेर का बाट हटा लिया और तब एक ओर १० सेर और दूसरी ओर ६ सेर रह गये। बाट बराबर नहीं हैं। नतीजा क्या होगा? १० सेर का नीचे चला जायगा, और ६ सेर का उपर उठेगा। एक पल के बाद हम यह चार सेर का बाट ६ सेर के बाट में जोड़ देते हैं। फिर हम दोनों बोझ दोनों तरफ समान कर देते हैं। तब क्या परिणाम होगा? बहुत से लोग बयान करते हैं कि पलड़े बराबर सध जायेंगे, किन्तु बात ऐसी नहीं है, वे डोलते रहेंगे। पहली दृष्टि से ऐसा जान पड़ता है कि बोझों के बराबर हो जाने के एक पल के ही बाद गति भी समान हो जायगी। जब राम ने इस विषय पर विश्वविद्यालय में व्याख्यान दिया, तब सब विद्यार्थी कहने लग पड़े कि गति रुक जायगी, किन्तु जब उन्हें प्रयोग दिखाया या समझाया गया, तब उनकी आँखें खुलीं। जब बाट बराबर कर दिये गये, तब भी पलड़े हिलते डुलते रहे, रुके नहीं। इस तरह प्रारम्भ में हम समझते हैं कि यदि बाट बराबर कर दिये जायेंगे तो वह ठहर जायेंगे, मौलिक शान्ति क़ायम हो जायगी। एक बार जब गति शुरू हो जाती है, तब फिर दोनों ओर बोझ बराबर कर देने पर भी हिलना-डोलना रोका नहीं जा सकता। यदि हम ६ सेर और १० सेर के बाटों को दो पल तक दो तरफ काम करने दें और दो पल के बाद हम चार सेर का बाट फिर बढ़ा दें, तो दोनों तरफ बाट बराबर हो जाने पर भी गति सधेगी नहीं, रुकेगी नहीं। इसी तरह यदि तीन पल के बाद हम बोझ बराबर करें, तो भी गति रुकेगी नहीं। पहले पल के अन्त में हमें एक अन्तर दिखाई देता है, बोझों की तेज़ी या चाल प्रति पल ४ फुट अवश्य होगी।

यदि असमान बाट एक पल हिलते रहते हैं तो परिणामभूत शीघ्रगति ४ फुट होती है, और यदि असमानता दो पल तक बनी रहे तो परिणामभूत तीव्रगति ८ फुट होगी। यदि असमान बाटों को निरन्तर तीन पल तक काम करने दिया जाय, तो तीव्रगति १२ फुट होगी, और ४ पल के अन्त में वह १६ फुट होगा, इत्यादि। हम देखते हैं कि यदि बाट असमान रक्खे जाते हैं, तो परिणाम यह होता है कि हरेक पल के अन्त में गति की तीव्रता में अन्तर पड़ जाता है, गति की मौलिक-तीव्रता original velocity में ४ फुट का योग होता जाता है। इस तरह गति अपनी ४ फुट की तरक्की प्रति पल पाती ही जाती है। जो तीव्रगति अब तक प्राप्त हो चुकी है वह वही बनी रहती है। हम देखते हैं कि यदि बाट शुरू में, गति आरम्भ होने के पूर्व, बराबर कर दिये जाते हैं, तो बाट बराबर होने के कारण स्थिरता बनी रहती है। यदि बाट ४ फुट की तेज़ चाल चल चुकने के बाद समान किये जाते हैं, तो बाटों की समानता चाल की तेज़ी में अधिक वृद्धि होने से रोक देगी, और यदि दूसरे पल के अन्त में बाट बराबर किये जाते हैं, तो परिणाम यह होगा कि हाथ लगी चाल ८ फुट होगी और इस तीव्रगति में और तरक्की न होगी, और तीसरे पल के अन्त में लब्ध तीव्रगति १२ फुट होगी, तथा और आगे वृद्धि चाल में न होगी। पहले पल के अन्त में तेज़ी की तरक्की वेग-वृद्धि (acceleration) कहलाती है। किन्तु यहां हम एक दूसरी ही बात देखते हैं। जब दोनों ओर बाट समान कर दिये जाते हैं, तब तनुओं पर प्रभाव डालने को कोई शक्ति नहीं रह जाती। यदि तनुओं पर कोई शक्ति प्रभाव न डालती हो, तो विश्राम या प्रगति की अवस्था में कोई परिवर्तन नहीं उत्पन्न किया जा सकता। विश्राम या प्रगति

(हरकत) में कोई परिवर्तन नहीं पैदा होता है। यदि वहां मौलिक स्थिरता है और हम शक्ति एक ओर १० सेर तथा दूसरी ओर १० सेर कर देते हैं, और यदि बाटों में एक पल भर प्रगति रही है और तब बाट बराबर किये गये हैं, तो इस क़ानून के अनुसार शुरू प्राप्त प्रगति बनी रहेगी। इस से मौलिक स्थिरता या पहिले से प्राप्त वेग रुकता नहीं है, किन्तु बाटों की समानता वेग में आगे को परिवर्तन न होने देगी। इस तरह यदि दूसरे पल के अन्त में हम बाट समान कर देते हैं, तो पहिले से प्राप्त वेग वही बना रहेगा। इसी तरह तीसरे पल के अन्त में बाटों की समानता पहिले से प्राप्त १२ फुट की तीव्रगति के वेग में और कोई परिवर्तन न होने देगी।

अब हम आत्मानुभवी मनुष्य के मामले पर आते हैं। आत्मानुभव दोनों ओर बाटों की बराबरी मात्र है। आत्मानुभव बोझों को बराबर करता है, आप के अन्दर से असमानता को निकाल लेता है। वह (आत्मानुभव) आप को बाहरी परिस्थितियों से मुक्त करता है। वह आप को हवाओं और तूफ़ानों की करुणा की अधीनता से छुड़ाता है। आत्मानुभव आप को बाहरी प्रभावों से बचाता है। वह आप को अपने बल पर खड़ा करता है। यह होजाने पर आगे के लिये सब वेगवृद्धि रुक जाती है, किन्तु पहिले की प्राप्त त्विग्रगति वहां बनी रहती है। पहिले से प्राप्त गति को हम जड़ता या पूर्व अभ्यास कहते हैं। वह वहां बना रहता है। वह अपनी राह आप लेवेगा। हम देखते हैं कि यह आत्मानुभव कुछ लोगों को हुआ था, जिनमें पहिले से प्राप्त वेग बहुत ही कम था, किन्तु उनके शरीरों के द्वारा महान् कार्य नहीं हुए थे।

किन्तु दूसरे लोग हैं जिनकी पहिले से प्राप्त की हुई गति की तीव्रता अद्भुत, आश्चर्यजनक है। वे स्वच्छन्द हैं किन्तु उनके शरीरों की प्रगति जारी रहेगी। उनके शरीर विलक्षण कार्य करते रहेंगे, महान और उत्कृष्ट कार्य आत्मानुभव का दूसरा नाम है।

डाक्टर एनथोनी (Dr Anthony) का दिया हुआ वाक्य है। "Pleasures wrapped up in duties' garments."

"सुख कर्त्तव्यों के वस्त्रों में लिपटे हुए हैं।"

अपनी परमेश्वरता को अनुभव करो, और फिर हरेक बात पूर्ण है।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

वेदान्त और साम्यवाद

वा

समष्टिवाद (SOCIALISM)

सब से पहले नाम समष्टिवाद (Socialism) के संबंध में, राम उसे व्यक्ति स्वातंत्र्य वाद Individualism) कहना पसन्द करेगा। समष्टिवाद का शब्द समाज के शासन की कल्पना को प्रमुखता देता है, किन्तु राम कहता है कि सत्य का यथार्थ तत्व तो सारी दुनिया, बल्कि सम्पूर्ण विश्व के भी विरुद्ध व्यक्ति स्वातंत्रता की श्रेष्ठता को निरूपण करने के लिये है। तब तो कोई हैरानी, कोई चिन्ता नहीं है। इसी को राम व्यक्ति-स्वातंत्र्यवाद कहता है, लोगों की यदि इच्छा है तो उन्हें इसे साम्यवाद व समष्टिवाद कहने दीजिये। पर व्यक्ति के स्थिति-विन्दु से यह वेदान्त की शिक्षा है।

पुनः हम देखते हैं कि जिसे (साम्यवाद socialism) कहते हैं उसका लक्ष्य केवल पूँजीवाद को परास्त करना है। और यहां तक वह वेदान्त के लक्ष्य से एक है, जो कि आप को केवल स्वामित्व के सम्पूर्ण भाव से रहित कर देना चाहता है, और सम्पत्ति का सम्पूर्ण भाव तथा सम्पूर्ण रूप से स्वार्थपूर्ण अधिकार को हवा में उड़ा देना चाहता है। यह है वेदान्त और यह है साम्यवाद। लक्ष्य एक हैं।

वेदान्त समता की शिक्षा देता है, और यही परिणाम वा अन्त अवश्य सच्चे साम्यवाद का है, अर्थात् उस के हां भी

किन्हीं बाहरी मिलकियतों के लिये न कोई सन्मान है, न कोई आदर, और न कोई इज़्ज़त है। यह बहुत ही विकट और बड़ी ही कठोर सी बात जान पड़ती है, किन्तु तब तक पृथिवी पर कोई सुख नहीं हो सकता, जब तक मनुष्य सम्पत्ति और अधिकारों, मोह और आसक्ति के सम्पूर्ण भाव को नहीं त्याग देता। परन्तु साम्यवाद केवल यह चाहता है कि मनुष्य इस सब को त्याग दे, और वेदान्त इस के साथ २ ऐसा करने के लिये एक महान कारण भी प्रदान करता है। नामधारी साम्यवाद तो वस्तुओं के केवल ऊपरी तल (बाह्य रूप) का ही अध्ययन मात्र है, और इस परिणाम पर पहुँचता है कि मानव जाति को समता, बन्धुत्व और प्रेम जीवन के व्यवहार पर जीवन बिताना चाहिये। वेदान्त इस व्यापार का अध्ययन स्वदेशी (स्वाभाविक) दृष्टिकोण से करता है। उस (वेदान्त) के अनुसार किसी व्यक्तिगत सम्पत्ति का अधिकार अपनी आत्मा या आन्तरिक स्वरूप के विरुद्ध अत्यन्त पापाचार है। वेदान्त के अनुसार मनुष्य का एक मात्र अधिकार केवल अर्पण करना है, और लेना वा माँगना नहीं है। यदि तुम्हारे पास देने को और कुछ नहीं है, तो अपनी देह कीड़ों के खाने के लिये दे दो। जो कुछ तुम अपने पास रखते हो वह कुछ भी नहीं है, उस के लिये तुम्हें कोई भी धनी पुरुष नहीं कहता। जो कुछ तुम दे डालते हो उस से तुम अमीर हो। हरेक व्यक्ति किसी वस्तु का अधिकारी बनने के लिये नहीं, किन्तु हरेक वस्तु को दे डालने के लिये काम करता है। दुनिया सब से बड़ी भूल यह करती है कि वह लेने पर सुख का भाव आरोपित करती है। वेदान्त चाहता है कि आप इस सत्य को पहचानें वा अनुभव करें कि सर्व सुख देने में है, और लेने वा माँगने में नहीं है।

जिस क्षण तुम माँगने या भिक्षा की वृत्ति को प्रवेश करने देते हो, उसी क्षण तुम अपने आप को संकीर्ण या संकुचित कर लेते हो और जो कुछ तुम्हारे अन्दर आनन्द होता है उसे तुम बाहर निचोड़ देते हो। जहां कहीं आप हों, दाता की स्थिति में काम करें और भिखारी की स्थिति में कदापि नहीं, ताकि आप का काम विश्वव्यापी काम हो, और तनिक भी निजी न हो।

भारत के वेदान्तवादी साधु आज भी यह साम्यवादी जीवन हिमालय पर व्यतीत कर रहे हैं, और ऐतिहासिक काल के पूर्व से ही ऐसा जीवन व्यतीत कर रहे हैं। वे बड़ी सख्त मेहनत करते हैं, वे निठल्ले नहीं हैं, वे आरामतलब और बिलासी मनुष्य नहीं हैं, क्योंकि उन्हीं के प्रयत्नों से भारत के सम्पूर्ण महान साहित्य की उत्पत्ति हुई है। यही लोग सर्व श्रेष्ठ कवि, नाटककार, वैज्ञानिक, तत्वज्ञानी, वैयाकरणी, गणितज्ञ, ज्योतिर्विद्, रसायनशास्त्री, आयुर्वेदज्ञ हुए हैं, और तथापि यही वे लोग हैं जिन्हों ने रुपया कभी नहीं छुआ। यही वे लोग हैं जिन्हों ने यथासाध्य कठोरतम जीवन व्यतीत किया। इस से साम्यवाद पर लगाया जाने वाला ऐसा कलंक धुल जाता है कि वह लोगों को कायर, आलसी, और परावलम्बी बना देगा। केवल वही खूब काम कर सकता है जो अपने को स्वच्छन्द समझता है।

वेदान्त और साम्यवाद के भी अनुसार आप को अपने बच्चों, स्त्री, घर या किसी वस्तु पर अधिकार जमाने का कोई हक नहीं है।

सभ्य समाज के ललाट पर यह बड़ा कलंक का टीका है कि नारी एक वाणिज्य की वस्तु बनाई गई है और मनुष्य

इसी अर्थ में उस पर अपना अधिकार जमाता या उसे क़ाबू रखता है, जैसे वृक्ष, घर या रूपया उसका अपना होता है। इस प्रकार सभ्य समाज में नारी को अचेतन पदार्थ की स्थिति दी गई है, तथा नारी के हाथ पैर बंध रक्खे जाते हैं जबकि मनुष्य अपने मार्गों या ढंगोंमें स्वतंत्र है। वह अभी एक मनुष्य की सम्पत्ति हो जाती है, फिर दूसरे मनुष्य की। साम्यवाद के और वेदान्त के भी अनुसार यह अति विचित्र जान पड़ता है किन्तु नारी को अपनी स्वाधीनता उसी तरह पहचानना चाहिये जिस तरह मनुष्य पहचानता है। वह उतनी ही स्वाधीन है जितना कि मनुष्य है। फिर यदि मनुष्य को कोई वस्तु अपने अधिकार में न रखना चाहिये तो नारी को भी किसी वस्तु पर अधिकार न जमाना चाहिये, अपना आनन्द स्थिर रखने के लिये उसे भी अपने पति पर अधिकार रखने का कोई हक न होगा। यहां पर साम्यवाद के विरूद्ध एक गंभीर आपत्ति उठती है। यदि साम्यवाद नर और नारी को पूर्ण स्वाधीनता दे दे, तो वह समाज को पशुता की अवस्था में ले आवेगा, और लम्पटों, दुराचारियों की दुनिया बना देगा। राम कहता है कि नर और नारी के लिये नारी पुरूष के संबंध के दृष्टिविन्दु से इससे बेहतर कुछ नहीं हो सकता। गौ और भैंस जैसे पशु अपने कामव्यवहार में बड़े ही बुद्धि गत हैं, अपने वर्ताव में बड़े ही ऋतु संगत(समयोचित) और युक्ति संगत हैं। यदि मनुष्य भी उसी ढँग से वर्ताव करें, तो सभ्य समाज की सब कामुकता और विकार (lust and passion) का अन्त हो जाय।

आश्चर्यों का आश्चर्य। कामासक्त पुरूष को पशु कह कर मनुष्य कैसी भयंकर भूल करता है, क्योंकि पशु निस्स-

न्देह मनुष्य से कम कामासक्त हैं। उनमें अनुचित काम-विकार का कोई चिन्ह नहीं है। जब उन्हें सन्तानोत्पति करना होती है, तभी वे मैथुन करते हैं। मनुष्य का यह हाल नहीं है। जो मनुष्य शान्त और धीर वा अमत्त है वह कामी मनुष्य की अपेक्षा अधिक पशुओं का स्वाभाविक जीवन व्यतीत करता है। किसी कामासक्त मनुष्य को पशु नहीं कहना चाहिये, वह तो सभ्य मनुष्य है। यह तो सभ्यता की विशेषता है, न कि समाज की असभ्य अवस्था की। वे (असभ्य लोग) तो स्वाभाविक और बुद्धि संगत हैं। उनका हरेक कार्य ऋतु में और नियत समय पर होता है। वेदान्त के अनुसार और साम्यवाद के अनुसार जितनी अधिक अमत्तता (Sobriety) और प्रकृति की अधिक शान्त अवस्था की प्राप्ति होगी, उतनी इस विकलकारी विकार (passion) की कमी होगी, किन्तु साथ ही साथ पति या स्त्री और पिता या पुत्र का सा स्वत्वाधिकार वाला भाव भी कोई न होगा।

"इस बच्चे या इस स्त्री अथवा इस बहन की फिक्र हमें करना है," इस भावना का निरन्तर बोझ मनुष्य को अपने अध्ययन या अपनी परमेश्वरता को अनुभव करने में नहीं लगा रहने देता। साम्यवाद या वेदान्त तुम्हारी छाती से यह बोझ हटा देना, तुम्हें स्वच्छन्द कर देना चाहता है। जब तुम अन्वेषण (तफतीश) के सागर में उतरते हो, तब तुम विजय पताका उड़ाते बाहर आते हो, और जब तुम अनुसन्धान (research) की रंग भूमि में प्रवेश करते हो, तब तुम कृतकार्य निकलते हो, क्योंकि तुम स्वच्छन्दता से पाशमुक्त, किसी प्रकार के बंधनों या दिक्कतों से अबद्ध या अबाधित (अप्रतिहत) हो कर काम करते हो। हर समय तुम अपने को स्वच्छन्द समझते हो, क्योंकि तुम निश्चय पूर्वक विशाल

दुनिया अपना घर समझते हो।

हमें केवल इतना ही करना है कि लोग देख लें कि उन के रोगों और बीमारियों की एक मात्र दवा अधिकार जमाने की कल्पना को दूर कर देना है। एक बार इसे जनसमुदाय की भारी संख्या के समझ लेते ही साम्यवाद सारे संसार में वन-वन्हि की तरह फैलेगा। यही वेदान्त-साम्यवाद उन के रोगों की एक मात्र चिकित्सा (इलाज) है। एक बार जहां यह वेदान्त-साम्यवाद दुनिया में सुन लिया गया, तब वैकुण्ठ यहीं हो जायगा, और उल्टी दृष्टि तथा आस-पास की परिस्थिति के परिच्छिन्न ज्ञान से उत्पन्न होनेवाली आपत्तियां गायब होजाँयगी। इस साम्यवाद के तले बादशाहों, राष्ट्रपतियों, धर्माचार्यों की ज़रूरत नहीं है, सेनाओं की कोई आवश्यकता नहीं है फिर विश्वविद्यालयों की कभी कोई ज़रूरत न पड़ेगी, क्योंकि हरेक मनुष्य अपना विश्वविद्यालय आप ही होगा। हम ऐसे पुस्तकालय रक्खेंगे जिन में हरेक मनुष्य आ कर पढ़ सकेगा। अध्यापक न होंगे, सिवाय छोटे बच्चों के लिये। डाक्टरों की ज़रूरत न पड़ेगी, क्योंकि वेदान्त के उपदेशानुसार प्राकृतिक जीवन व्यतीत करने से आप कभी बीमार नहीं पड़ सकते, आप को डाक्टर न चाहिये। लोग चाहे जो करेंगे, जहां जी चाहेगा घूमेंगे, अब की तरह अपने भाई का डर उन्हें न होगा, किन्तु भलाई करेंगे और वास्तव में हितकारी अध्ययनों, तत्वज्ञान, और अध्यात्म के अनुसन्धानों में अपना रुपया लगावेंगे, एवं अपने देवत्व और परमेश्वरत्व का पूर्णतम अनुभव करते हुए उसे अपने आचरण (जीवनचर्या) में लायँगे।

ॐ! ॐ!! ॐ!!!

आत्मानुभव के संकेत नं० २

परमेश्वर अब कुछ दूसरे आकारों (रूपों) में निरूपण किया जाता है। विशाल, विशाल क्षीरसागर में, जो समग्र विश्व का व्यापे हुए है, एक सुन्दर रेंगता सर्प या शेषनाग (उस परमेश्वर का) कोमल बिछौना बनाता है और अपनी देह की गडुरियां (तहें) मानो उस का एक गद्दा होती हैं। उसके सहस्र फनं छत्र का काम दे रहे हैं। ऐसे सागर पर एक अत्यन्त सुन्दर, मनोहर देवी लेटी हुई है, जो उस परमेश्वर की पत्नी है। उसकी देह पारदर्शक है, नेत्र आधे खुले हैं और अधर मुसकराते हैं। वह उस परमेश्वर के चरण धीरे धीरे दबा रही है। यह सुन्दर मूर्ति एक सुन्दर, शोभायमान कमल पर बैठी हुई है, और उस पर बैठ कर वह परमेश्वरके चरण दाब रही है, और देह मर्दन कर रही वा मुट्ठियां भर रही है। दोनोंके नेत्र मिल रहे हैं एक दूसरे के नेत्रों को देख रहे हैं। यह पत्नी क्या निरूपण करती है? वह ईश्वरत्व, बुद्धि, कल्याण, और आनन्द निरूपण करती है। वह उस परमेश्वर की अपनी महिमा है। इसका अर्थ यह हुआ कि मुक्तात्मा अपनी ही महिमा को हर समय देखा करता है, और वह आत्मा तब स्वतंत्र है जब कि दुनिया उसके लिये बिलकुल डूबी हुई होती है। सब नातों और सम्बन्धों से परे, सब बन्धनों को तोड़ कर, उसे दुनिया से कोई प्रयोजन नहीं होता है।

सागर का अर्थ अनन्तता है। और यह सागर क्षीर

का क्यों कहा जाता है? दूध में तीन गुण है। वह प्रकाश है, फिर वह सफेद है जिसका अर्थ कल्याण है, वह बलदायक भी है, जिसका अर्थ शक्ति है। वह फलतः क्षीरसागर अनन्त प्रकाश, अनन्त कल्याण और अनन्त शक्ति का रूप है। इस में दो (नारायण लक्ष्मी) आराम करते हैं।

अब शेषनाग का क्या अर्थ है? शेष नाग का अर्थ है वह एक जो हरेक चीज़ के बाद बच रहता है। जब सांपिन अपने १०० सौ अंडे देती है, तब वह अपने ही दिये हुए अंडों को खाना शुरू करती है। हरेक वस्तु मर जाती है, केवल एक वस्तु रह जाती है। कल्याण, ज्ञान और शक्ति के सागर में एक अमर तत्त्व रहता है। दोनों अपनी ही महिमा में पूर्ण आनन्द, स्थिर और शान्त हैं। ॐ!

राम दो बातों पर आपका ध्यान विशेष रूप से खींचता है:—

१—परिच्छिन्नात्मा का निषेध (अनंगीकार)

२—शुद्धात्मा का असंदिग्ध निरूपण (अंगीकार)।

प्रथमः—वेदान्त के अनुसार उक्त निषेध पूर्ण विश्राम (उपशम), चैन, आराम, त्याग है। जब कभी तुम समय निकाल सको, पलँग पर या कुर्सी पर पड़ रहो, मानो वह बोझ या भार तुम कभी साथ नहीं ले जा रहे थे और उससे कोई मतलब नहीं था, तथा उससे तुम उतने ही अपरिचित थे जितने कि किसी शिलाखंड से। कुछ देर तक देह को निर्जीव मुर्दे की तरह आराम करने दो, संकल्प या विचार पर किसी तरह का ज़ोर डाल कर सहारा न लो ताकि किसी तरह का तनाव न हो। देह का सब अनुराग और मोह त्याग दो। चित्त को शरीर या किसी भी वस्तु की सारी

फिक्रों और चिन्ताओं से छुट्टी पा जाने दो । सब इच्छा या आकांक्षा को त्याग दो और उन का निषेध करो । यही है निषेध या निवृत्ति (relaxation) ।

द्वितीय:-परमेश्वरता । ईश्वर की मर्ज़ी को ही अपनी मर्ज़ी बनाओ । चाहे सुख के लिये हो या दुख के लिये ईश्वरेच्छा का पालन करो, मानो वह तुम्हारी ही इच्छा है, और "आत्मानुभव' सम्बन्धी व्याख्यान में वर्णित विचारधारा के अनुसार अपने को शरीर और उसके अड़ोस पड़ोस, मन और उसके प्रवर्तक (motives), सफलता और भय का विचार,इन सब से ऊपर (पृथक) समझो;अपने आपको सर्वव्यापी,परम शक्ति,सूर्यों का सूर्य,कारणातीत नाम रूप संसार और समस्त महान लोकों, पूर्णानन्द तथा स्वाधीन राम से अभिन्न समझो । किसी सुर या सुरों में जो स्वभावतः और अनायास तुम्हारे ध्यान में आजायं, ॐ उच्चारो,प्रणव गाओ । ऐसा समझो कि "मैं पूर्ण आनन्द, आनन्द, आनन्द हूं" । इस तरह पर शिकायतों और रोगों के सब हेतु स्वतः आपके सामने से चले जाँयगे । दुनिया और आपका आस-पास ठीक वैसे ही है जैसे आप उन्हें समझते हैं । दुनिया हृदय पर भारी न होने पाय । दिन और रात इस सत्य का ध्यान करो कि दुनिया का सम्पूर्ण लोकमत और समाज केवल मेरा ही संकल्प है और मैं ही असली शक्ति हूँ,कि जिसकी सांस या छाया मात्र सारी दुनिया है । आप अपने लक्ष्य के शिखर पर क्यों नहीं पहुँचते ? इसका कारण यह है कि आप अपने निकट पड़ोसी, परम शुद्ध स्वरूप की अपेक्षा दूसरों के चंचल, अस्थिर, और धुँधले निर्णय का अधिक आदर तथा सत्कार करते हो । राम कहता है अपने ही लिये जियो,

न कि दूसरों की सम्मत्तियों के लिये। स्वतंत्र हो। एक प्रभु, निज स्वरूप, अद्वितीय सच्चे पति, मालिक, अपने ही भीतरी परमेश्वर को प्रसन्न करने का यत्न करो। अनेक, सर्वसाधारण, बहुमत को आप किसी हालत में न सन्तुष्ट कर सकेंगे, और सहस्र-शिरधारी (पागल) जनता को संतुष्ट करने को आप किसी तरह भी बाध्य नहीं हैं। सर्वसाधारण का क्या तुमने कुछ देना है? लोगों के क्या तुम किसी तरह के ऋणी हो? नहीं, बिलकुल नहीं। तुम आप अपने विधाता हो। अपने आप के लिये गाओ, मानो अकेले तुम्हीं तुम हो, और कोई पास सुननेवाला नहीं है। जब तुम्हारा अपना आत्मा प्रसन्न है, तब जनता अवश्य संतुष्ट होगी। यही क़ानून है। दूसरों के लिये अस्वाभाविक जीवन जीने से क्या लाभ?

एक राजकुमार अपने बचपन में दरबारियों के बच्चों के साथ लुक्कन छिप्पन (hide & seek) खेल रहा था। उसे लड़कों को ढूढ़ने में बड़ा झंझट करना पड़ा। पास खड़े एक मनुष्य ने कहा, "संगी खिलाड़ियों को ढूढ़ने में इतना झंझट करने से क्या फ़ायदा जब कि एक क्षण में वे जमा किये जासकते हैं यदि आप उन्हें आज्ञा देने में अपनी शाही सत्ता से काम लें"? एसे सवाल का जवाब यह है कि उस हालत में खेल का मज़ा जाता रहेगा। खेल में कोई आनन्द न रह जायगा। ठीक इसी तरह, राम के अनुसार, वास्तव में तुम सर्वश्रेष्ठ शासक और सब के जाननेवाले सर्वज्ञ देवता हो, किन्तु चूँकि तुमने खेल में अपने ही विषयों (सब तरह के विचारों और नाम मात्र के ज्ञान) को दुनिया की लुकन्न छिपन्न (लुकी लुकौवल) वाली भूल-

भुलैया में ढूंढ़ना शुरू किया है, इस लिये विचार की गंध त्याग देना और खेल में उस अधिकार (सत्ता) से काम लेना, जिससे सारा खेल रुक जाता है, उचित खेल न होगा। जिस प्रदेश में भूत, वर्तमान. और भविष्य और सब हज़ारों सूर्य तथा नक्षत्र आप के अपने आत्मा (स्वरूप) होजाते हैं तथा आप के ज्ञान के सागर में तरंग और भँवर मात्र होते हैं, उसमें आप क़ानून (वकालत) की परीक्षाओं और सांसारिक सफलता की कैसे परवाह कर सकते हैं ? यदि आप सच्ची दिव्यदृष्टि को प्राप्त करना (clairvoyance) चाहते हैं, तो आप को इन्द्रियों के लोक को, जिससे आप दिव्यदृष्टि (clairvoyance) चाहते थे, त्यागना या उससे ऊपर उठाना होगा।

मछली पकड़ने को एक जाल बिछाया गया था। मछलियां जाल में फंस कर अपनी प्रचण्ड शक्ति से उसे घसीट ले गई। ईश्वर को ऐसी सलाह न दो कि वह आप के साथ ऐसा बर्ताव करे, अपनी मर्ज़ी का आदेश 'उस' न दो, अपने आप को 'उस' पर छोड़ दो, क्षुद्र वा परिच्छिन्नात्मा को त्याग दो, नक़ली इच्छाओं को छोड़ दो, और इस प्रकार अपने शरीर और चित्त को आप प्रकाश से परिपूर्ण तथा ईश्वरादेश (इल्हाम वा श्रुति) का पूर्ण यंत्र बना देंगे। सम्पूर्ण सत्यज्ञान और वास्तविक शिक्षा भीतर से आती है और किताबों या बाह्य वा बहिर्मुख चित्तों से नहीं। अलौकिक बुद्धि पुरुषों (men of genius)ने, तफतीश के क्षेत्र में नवीन कार्यकर्ताओं ने केवल तभी अपने आविष्कार (discoveries) और अनुसन्धान (investigations) किये, जब कि वे विचारमें नितान्त लीन थे, इन्द्रियोंके लोक से

बहुत ऊपर थे, किसी प्रकार की जल्दी या एषणा (कांक्षा) से बहुत ऊपर थे, जबकि वे अपने व्यक्तित्व और मानसिकता को स्वार्थपरता की किसी भी प्रवृत्ति से रहित कर चुके थे। वे एक पारदर्शक दर्पण या शीशे के द्वारा देख रहे थे और ज्ञान का प्रकाश उन के द्वारा चमका, उन्हों ने पुस्तकों पर प्रकाश डाला, पुस्तकालयों और पुस्तकों को प्रकाशित किया, और पुस्तकालय उन्हें प्रबुद्ध नहीं कर सके। यह है काम। काम से राम का अभिप्राय नित्य की नीच चाकरी कदापि नहीं है। वेदान्त में कार्य का अर्थ सदा विश्व से समताल होना तथा वास्तविक आत्मा से एक स्वर होकर स्फुरण करना है। वस्तु मात्र से यह निष्कामता पूर्ण एकता जो वेदान्त के अनुसार असली कार्य है, मूर्खों द्वारा प्रायः अकार्य या आलस्य की उपाधि पाती अथवा मार्का दी जाती है। कृपया "सफलता के रहस्य" (इस नाम के व्याख्यान) को एक बार फिर पूरी तरह पढ़िये, तब अत्यन्त कष्टसाध्य कार्य भी, वेदान्त की वृत्ति से किया जाने पर पूर्ण सुख और खेल जान पड़ता है, तथा गुलामी या बोझ तनिक भी नहीं प्रतीत होता। इस तरह वेदान्त की शिक्षानुसार एक दृष्टि कोण से जो सर्वोच्च कार्य कहा जाता है वह दूसरे दृष्टि कोण से कोई काम ही नहीं है।

हिन्दू पुराणों में परमेश्वर के दो आकार दिये हुए हैं। प्रत्येक धर्म के तीन रूप होने चाहिये। एक है तत्वज्ञान, दूसरा क्रिया-विधि (कर्म-काण्ड) और तीसरा पुराण। तत्वज्ञान विद्वान् के लिये है, कर्म-काण्ड बाह्य शरीर, वा बच्चों के लिये है, और पुराण विचारवान् के लिये है। तीनों का साथ रहता है। यदि एक भी बिछुड़ जाता है तो धर्म नहीं टिक

सकता। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में इन तीनों में पूर्ण समता होने के ही कारण हिन्दू धर्म आज भी तीस कोटि मनुष्यों का धर्म है। जिस धर्म में इन में से एक का भी अभाव है वह वास्तविक धर्म नहीं हो सकता। हिन्दू धर्म में ये तीनों पूर्णावस्था में हैं। हिन्दू पुराण से राम आप के सामने पूर्ण पुरुष या परमेश्वर का वर्णन करेगा जो निरन्तर मन में रहता है।

हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में परमेश्वर के दो रूप, परमात्मा के दो आकार(रूप) दिखाये गय हैं। एक सफ़ेद, महान, प्रभावशाली, सुन्दर युवा पुरुष, प्रतापी आकार, हिमालयके शिखरों पर बैठा हुआ, ध्यान और विचारमें मग्न, आंख बन्द, दुनियासे बेखबर, परमानन्द की साक्षात मूर्ति, दिक्कतों और बखेड़ों से दूर, सम्पूर्ण चिन्ता और फ़िक्र से मुक्त है। स्वतंत्र, स्वतंत्र, ऐसा प्राणी कि जिस के लिये दुनिया का कदापि अस्तित्व ही नहीं है। यह है परमेश्वरका एक चित्र। यह चित्र ध्यानका है। एक स्वच्छन्द, मुक्त आत्मा। श्वेत तो हिमालय का एक चिह्न है: और मन अचल, शान्त, शान्त।

इस के साथ उस परमेश्वर की पत्नी है जो सिर से पैर गुलाब के रंग की है। वह इस परमेश्वर के घुटनों पर बैठी हुई है और उस के लिये सदा वनस्पतियां तथा अन्य जोशीले रस घोटा करती है। परमेश्वर अपने नेत्र खोलता है और तुरन्त उस की पत्नी अपने तैयार किये नशीले अर्क से भरा हुआ एक कटोरा उस के मुख में लगा देती है ताकि वह फिर अपनी ध्यानावस्था में निमग्न हो जाय। तब वह उस से सम्पूर्ण विश्व के सम्बन्ध में प्रश्न करती है और वह उन प्रश्नों को उसे समझाता है। वह एक राजा की बेटी है,

किन्तु इस परमेश्वर के निकट रहने के लिये अपनी सब सुन्दर चीज़ें वह छोड़ चुकी है। परमेश्वर शिव कहलाते हैं, उन की पत्नी का नाम गिरिजा (पार्वती) है।

ॐ ! ॐ ! ! ॐ ! ! !

आत्मानुभव के संकेत नं० ३.

—:*:—

आप देखते हैं कि जीवन की मांगें (ज़रूरतें) और आप की अपनी शारीरिक तथा मानसिक ताकतों पर विभिन्न दावे ऐसे हैं कि आप पर सदा दबाव और खिंचाव डाल रहे हैं। यदि इन बाहरी परिस्थितियों से आप सदा अपने को दबाव और तनाव में रहने देते हैं, तो अपने ही हाथों और अपनी ही नसों से आप अपनी अकाल मृत्यु की व्यवस्था कर देते हैं।

इस से कैसे बचा जाय और कैसे कुछ आराम मिले ? राम काम को टालने या नित्य के कामों को त्यागने की सिफारिश नहीं करता है। राम ऐसी सलाह कदापि नहीं देता है। फिर भी वह एक बहुत ही सुन्दर आदत-जो आदत आप को सदा भारी और कठिन कार्यों से बचाये रहेगी—डालने की सलाह आप को देता है। यह सलाह वेदान्तिक त्याग से कुछ भी कम नहीं है। आप ने अपने आप को सदा त्याग की शिला पर रखना है, और उस श्रेष्ठ स्थान पर खड़े हो कर जो कार्य आप के सामने आ पड़े उस में दिलो जान से जुट जाना है। तुम थकोगे नहीं, तुम में काम-सम्हालने की शक्ति होगी।

और स्पष्ट करने के लिये—काम करते समय बीच बीच में थोड़ा आराम लो, और एक या दो मिनट के आराम के उन छोटे अन्तरों को इस विचार में लगाओ कि देह कुछ भी नहीं है, तुम्हारा कभी इस से कोई सरोकार नहीं था।

तुम एक साक्षी मात्र हो, शरीर के कामों के नतीजों या परिणामों से तुम्हें तनिक भी वास्ता नहीं। इस प्रकार विचार करते समय तुम अपने नेत्र बन्द कर लो, नसें ढीली कर दो, शरीर को पूरा आराम में रक्खो, और सारी चिन्ता का बोझ उतार दो। चिन्ता का बोझ अपने कंधे से उतारने में आप जितना अधिक सफल होंगे, उतना अधिक बलवान आप अपने को अनुभव करेंगे।

धमनियां (nerves) देह में प्राणशक्ति को रखने वाली हैं, और धमनियों का ही व्यूह विचार शक्ति का भी पोषक है। पाचन क्रिया, खून का दौर, बालों की बाढ़ इत्यादि अन्त में शिराव्यूह (nervous system) के ही कार्य पर निर्भर हैं। यदि आप की विचार शक्ति उद्विग्न है और आप सब तरह के विचारों से हैरान और जल्दी में हैं, तो इस का अर्थ आप की नाड़ियों पर बहुत अधिक बोझ है। नाड़ियों का यह चेष्टाशील विचार रूपी प्रयत्न के आकार में काम, जो एक ओर में लाभ है, तो दूसरी ओर से निश्चित हानि है। इस तरह पर देह के प्राणभूत कार्यों को हानि पहुँचती है। यह एक ही घोड़े पर दो भारी बोझों के रख देने के समान है। एक बोझ बढ़ाओ तो तुम्हें दूसरा घटाना चाहिये। घोड़े का बोझ उतार लो, तब बोझों के भार को बिना किसी तरह की हानि पहुँचाये घोड़ा दौड़ सकता है। यदि आप अपनी प्राणशक्ति को क़ायम रखना चाहते हैं, यदि आप अपने स्वास्थ्य को क़ायम रखना चाहते हैं, यदि आप चाहते हैं कि नाड़ी-चक्र का घोड़ा शरीर के भार को आसानी से सहन करे, तो आप को चिन्ता का बोझ हलका करना होगा। घबड़ाहट भरे विचारों और हैरानी भरी कल्पनाओं को अपने जीवन के रस

को न चूसने दो। पूर्ण स्वास्थ्य और प्रबल क्रियाशीलता का रहस्य इस में है कि आप अपने मन को प्रफुल्लित और प्रसन्न रक्खें, सदा परेशानी और जल्दबाज़ी से परे, और सदैव किसी भी प्रकार के भय और विचार या चिन्ता से रहित रक्खें।

इस प्रकार वेदान्तिक त्याग का अर्थ सम्पूर्ण चिन्ता, भय, खेद, व्यग्रता, और मन के क्लेश को, सदा अपनी मानसिक दृष्टि के सामने अपने वास्तविक आत्मा की परमेश्वरता रख कर, दूर करना और फेंक देना है, सब सांसारिक चिंताओं, परेशानियों और कर्त्तव्यों से बरी होना है। तुम्हें कोई कर्त्तव्य नहीं पालने हैं, तुम किसी में बंधे नहीं हो, तुम किसी के भी प्रति उत्तर दाता नहीं हो। तुम्हें कोई ऋण नहीं चुकाना है, तुम किसी के भी बंधन में नहीं हो, सब समाज और सब राष्ट्रों तथा हरेक वस्तु के विरुद्ध अपने व्यक्तित्व (स्वरूप) का निरूपण करो। यह है वेदान्तिक त्याग। समाज, रीति और मर्यादा, नियम, विधान, खंडन-मंडन, और आलोचनायें तुम्हारे वास्तविक स्वरूप को कदापि नहीं छू सकतीं। यह समझो, इसे (देह भावना को) अलग कर दो, इसे त्याग दो, यह तुम नहीं हो। ॐ का यह अर्थ करो, और थकावट के सब अवसरों पर ॐ को उच्चारो।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

उपदेश-भाग।

बिना भोजन के मनुष्य की तरह हम भूखे और प्यासे हैं, आत्मानुभव के स्वाद के लिये लालायित हैं, मंत्र जपते हैं, मन की सांस से बांसुरी बजाते हैं। इस लिये मन की झील में अगणित स्वार्थपूर्ण इच्छाओं को ढूँढ़ो और एक एक करके उनको कुचल डालो—दृढ़ प्रतिज्ञाएँ करो, और गम्भीर शपथें लो। जब तुम झील से बाहर निकल आवोगे, तब जल किसी पीने वाले के लिये विषैला न रहेगा। गौओं, नारियों, मनुष्यों को पीने दो—निन्दकों का विष ईश्वर से प्रवाहित स्वच्छ जल में बदल जायगा। (अपने मन में) दुर्बलता के विन्दु तलाश करो और उन्हें निर्मूल करदो। इच्छाएँ एकाग्रता को रोकती हैं, और जब तक विशुद्धता तथा आत्मज्ञान का अस्तित्व न हो, तब तक सच्ची एकाग्रता नहीं हो सकती। पहले आप उसे उखाड़ फेंको जो एकाग्रता की चेष्टा करते समय आप को नीचे घसीट लाता है। अपने आप के प्रति आप सच्चे बनो। इस देश में दूसरों के द्वारा अत्यन्त संख्या में व्याख्यान दिये जाते हैं। तुम्हें अपने आप को उपदेश देना चाहिये। बिना इसके कोई उन्नति नहीं आती है।

बिछौने पर जाने के पहले बैठ जाओ, और उन दोषों को चिन्हित करो जिन्हें हटाना है। इंजील, गीता, उपनिषद, या इमर्सन जैसे लेखकों को पढ़ो। यदि लोभ या शोक दोष हो, तो इस पठन की सहायता से विचार करो कि यह दोष क्यों मौजूद हैं, क्यों इसे जाना चाहिये, कैसे यह

तुम्हें रोकता है?—अपना मन उससे ऊपर उठा लो, ॐ उच्चारो। जब उसके पराजय का निश्चय हो जाय, अनुभव करो कि वह पराजित हो गया, और फिर उसका बिलकुल खयाल न करो। एक एक करके इन भुजंगों के फन पकड़ो, उन्हें कुचलो, और हरेक पर अपने आप को व्याख्यान दो। हरेक को अपना काम आप करना चाहिये। ध्यान करते समय ॐ जपो, जब तक वाणी रटती रहेगी और स्वर्गीय ध्वनि के प्रभाव पड़ते रहेंगे, तुम्हें सहायता मिलेगी, और सुन्दर संस्कार डाल कर आप बलवान होकर निकलेंगे। यह पहली क्रिया है।

सब दोषों का मूल कारण सब प्रकार की अविद्या है—अर्थात् शुद्ध आत्मा का अज्ञान, और अपने आत्मा को देह तथा बाहरी सुखों से अभिन्न मानने की इच्छा, एवं शोक, पीड़ा, क्लेश की सम्भावना है। जब आप अनुभव करलें कि आप अनन्त आत्मा हैं, तब आप उत्कट विकार या रंज के अधीन कैसे हो सकते हैं? लोग कहते हैं कि नैतिक नियम गणित विद्या के नियमों के समान निश्चित नहीं हैं। यह एक भूल है। गुफाओं और सुदूर वनों में तुम्हें देख कर विस्मय होगा कि घास तुम्हारे विरुद्ध गवाही देने को उठ खड़ी होती है—दिवालें और वृक्ष तुम्हारे अपराध को प्रमाणित करते हैं। जो लोग कारण नहीं जानते हैं वे अड़ोस-पड़ोस से लड़ते हैं। यह एक दैवी क़ानून है जो अभंगनीय घोषित किया जा सकता है। परमेश्वर के नयनों में धूल झोंकने की चेष्टा करने से तुम खुद अन्धे हो जाओगे। मलिनता को आश्रय देनेके परिणाम भोगने पड़ेंगे। ये क़ानून एक एक करके सिद्ध

होंगे, सिद्ध होजाने पर मनुष्य नीच इच्छाओं को नहीं अंगीकार कर सकता।

अपवित्र इच्छाओं पर एक बार प्रभुता होजाने पर आप जितनी देर चाहें एकाग्रता लाभ कर सकते हैं।

न भूख मरो और न अधिक खाओ। दोनों से बचना चाहिये। उपवास प्रायः स्वभावतः आता है, क्योंकि सहज स्वभाव का अनुसरण करना चाहिये, वह चाहे खाने का हो और चाहे उपवास करने का। दासता से बचना चाहिये। स्वामी बनो।

भारत में कुछ दिन, जैसे पूर्णिमा का दिन, एकाग्रता उत्पादक सिद्ध हुए हैं। उस दिन अभ्यास करो और आप ऐसे दिनों को सहायक पाओगे, यदि आप उस दिन विशेषतः बादाम आदि मग़ज़यात, रोटी और फल खाते हैं।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

सत्य-ग्रन्थ-माला

स्वामी सत्य देव की पुस्तकें ।

(१) अमरीका पथ प्रदर्शक ॥), (२) अमरीका दिग्दर्शन १), (३ अमरीका के विद्यार्थी ।), (४) अमरीका भ्रमण ॥=), (५) मनुष्य के अधिकार ।≡), (६) सत्य निबंधावली ॥=) (७) शिक्षा का आदर्श ।-). (८) कैलाश यात्रा ॥।), (९) राजर्षि भीष्म ।), (१० आश्चर्यजनक घटी ।=), (११) संजीवनी बूटी ॥), (१२) लेखन कला ॥)

रसायनशास्त्र ।

डाक्टर महेश चरण सिंह एम—एस सी

हिन्दी केमिस्टरी	३॥)
बनसपती शास्त्र	२)
बिद्युत शास्त्र	३)

श्री रामतीर्थ ग्रन्थावली

के

गत वर्षों के २४ भाग अब छे छे भागों के चार सैटों (खराडों) में विभक्त तैयार हैं।

चारों सेटों के पृष्ठ लगभग ३५०० हैं

मूल्य प्रति सैट साधारण संस्करण बिना जिल्द ३)

,, फुटकर भाग ,, ,, ।।=)

,, प्रति सैट विशेष संस्करण सजिल्द ४॥)

,, फुटकर भाग ,, ,, ।।।)

डाक और पैकिंग खर्च ग्राहक के ज़िम्मे होगा।

वर्तमान वर्ष अर्थात् दीपमालिका सं० १९८१

तक लगभग १००० पृष्ठ के छे भाग प्रकाशित होंगे।

इनका पेशगी वार्षिक शुल्क निम्न लिखित रीति से होगा

१—प्रत्येक भाग केवल बुक पैकिट द्वारा मंगाने वाले से बिना जिल्द ३) रु० और सजिल्द ४॥) रु०

२—प्रत्येक भाग रजिस्टर्ड बुकपैकिट द्वारा मंगाने वाले से बिना जिल्द ३॥) रु० और सजिल्द ५।) रु०

३—प्रत्येक भाग वी० पी० द्वारा मंगाने वाले को ॥) पेशगी अपना नाम दर्ज रजिस्टर्ड कराने के लिये भेजने होंगे, फिर उसे भी वार्षिक शुल्क के भाव से भाग मिलेंगे।

उक्त रीत्यानुसार स्थाई ग्राहक बनने के लिये शीघ्र शुल्क भेजिये या वी० पी० द्वारा भाग भेजने की आज्ञा दीजिये।

मैनेजर,

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग, लखनऊ।